एच. एस. बरार,. के. एस. कुमार एन और स्वतंत्र कुमार, जेजे के सामने

राज पाल छाबड़ा,- याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य,- उत्तरदाता

1995 का सी. डब्ल्यू. पी. 10116

5अगस्त, 1998

भारत का संविधान, 1950 (74वां संविधान संशोधन)-अनुच्छेद 226,243-पी, 243-आर, 243-जेडजी और 251हरियाणा नगरपालिका अधिनियम, 1973 (1995 के अधिनियम 3 द्वारा यथासंशोधित)- धारा 9 और 21-हरियाणा नगरपालिका नियम, 1978-नियम 72-ए- अविश्वास प्रस्ताव-15 जुलाई, 1995 को संशोधित अधिनियम के लागू होने से पहले पारित प्रस्ताव-संशोधित प्रावधान पूर्वव्यापी नहीं हैं और मौजूदा अधिकार छीन नहीं लिए गए हैं और इससे पहले पारित अविश्वास प्रस्ताव की वैधता या अन्यथा प्रभाव नहीं पड़ेगा -प्रत्यायोजित विधान-अनुच्छेद 243-आर खंड 2-ए के उपखंड (i) से (iv) में आने वाले व्यक्तियों के नगरपालिकाओं में प्रतिनिधित्व का प्रावधान करता है-खंड (i) के तहत नामित सदस्यों को वोट देने का कोई अधिकार नहीं है, हालांकि समिति के सदस्यों के रूप में संसद और राज्य विधानसभा में लोक सभा के निर्वाचित प्रतिनिधियों को वोट देने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है।- अभिव्यक्ति "समिति के 2/3 सदस्य" राज्य सरकार द्वारा निर्वाचित और नामित लोगों को शामिल करने के लिए-हरियाणा संशोधन अधिनियम मतदान का अधिकार छीन रहा है हरियाणा अधिनियम की धारा 9 (3) का दूसरा प्रावधान संविधान और इसकी मूल संरचना के अधिकार से बाहर हैलागू किया गया अनेकता का सिद्धांत-अधिनियम में उपयोग किए गए "समिति के सदस्य" और "समिति के सदस्यों की कुल संख्या" शब्दों के बीच अंतर।

यह अभिनिर्धारित किया गया कि हम काका बनाम हसन बानो और अन्य, 1998 (1) ए. आई. जे. 50 और डॉ. हरभजन सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य, 1995 पी. एल. जे. 24 और ज्ञान चंद कालरा बनाम हरियाणा राज्य और अन्य, 1996 पी. एल. जे. 670 में इस न्यायालय की पूर्ण पीठ द्वारा लिए गए दृष्टिकोण के साथ सम्मानजनक सहमति में हैं। हमारा मानना है कि इन प्रावधानों का इस अर्थ में पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है कि यह संशोधनों से पहले पारित प्रस्ताव की वैधता या अन्यथा को प्रभावित कर सकता है।

(पैरा 16)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि इस संबंध में राज्य के विधान को सुरक्षित रूप से अधीनस्थ विधान के बराबर माना जा सकता है और कोई भी निर्दिष्ट विधान राज्य के विधान को सशक्त बनाने वाले अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप होना चाहिए।

(पैरा 22)

इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम के उपबंधों में अन्तर्निहित भाषा, भाव और सार को ध्यान में रखते हुए समिति के सदस्यों की अभिव्यक्ति उन सदस्यों को इंगित करेगी और शामिल करेगी, जिन्हें समिति के कार्य में प्रभावी रूप से भाग लेने का अधिकार है और जो महत्वपूर्ण महत्व के मामलों के संबंध में इसकी निर्णय लेने की प्रक्रिया को भौतिक रूप से प्रभावित करते हैं। उन व्यक्तियों को शामिल करना जो केवल समिति को सलाह देने वाले हैं और जिनकी निर्णय लेने की प्रक्रिया में प्रभावी भागीदारी और वोट देने का अधिकार कानून द्वारा विशेष रूप से वर्जित किया गया है, हमारे विचार में, समिति के सदस्यों की संख्या का वैध रूप से हिस्सा नहीं बन सकता है, जो अधिनियम की धारा 21 के तहत प्रस्तुत अविश्वास प्रस्ताव के भाग्य का फैसला करेंगे। धारा 9 की उपधारा (3) के खंड (i) के तहत समिति के सदस्यों के रूप में नामित व्यक्ति वे व्यक्ति हैं जिन्हें नगरपालिका के प्रशासन में उनके विशेष ज्ञान या अनुभव के कारण इस प्रकार नामित किया जाता है। उन्हें उसी अधीनता के पहले प्रावधान के तहत मतदान करने का कोई अधिकार नहीं होगा। अविश्वास प्रस्ताव को समिति का केवल प्रशासनिक कार्य नहीं कहा जा सकता है। वास्तव में यह एक ऐसा प्रश्न है जो संविधान और निर्वाचित निकाय के कार्यों के मूल में जाता है और इसके परिणामों को समिति के सामान्य और नियमित कार्य या प्रशासनिक निर्णयों के बराबर नहीं माना जा सकता है।

(पैरा 30)

इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया गया कि हरियाणा नगरपालिका अधिनियम के संशोधित उपबंधों का 372 आईएलआर पंजाब और हरियाणा 1998 (2) पर कोई पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं होगा, इस हद तक कि ऐसे संशोधन सदस्यों के मौजूदा अधिकारों को समाप्त या अमान्य नहीं करेंगे, या संशोधन से पूर्व समिति द्वारा किए गए कार्यों या निर्णयों को प्रतिकूल रूप से, ऐसे उपबंध संशोधन की तारीख से संभावित रूप से प्रभावी होंगे। हमारा विचार है कि इन प्रावधानों को पूर्वव्यापी प्रभाव देकर अधिकारों को समाप्त करने और कार्यों को अमान्य करने का विधानमंडल द्वारा संशोधित प्रावधानों में दूर से भी संकेत नहीं दिया गया है। उस सीमित सीमा तक, हम डॉ. हरभजन सिंह और ज्ञान चंद कालरा के मामलों में इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा व्यक्त विचार की पुष्टि करेंगे।

(पैरा 33)

अभिनिर्धारित किया गया कि इस अनुच्छेद के उपबंध अधिनियम की धारा 9 के समतुल्य हैं। संविधान के अनुच्छेद 243-आर का खंड (2) राज्य द्वारा प्रत्यायोजित विधान की सीमा और दायरे का संकेत देता है। संसद ने अपने विवेक में अपने इरादे को स्पष्ट शब्दावली में व्यक्त करके राज्य विधान की सीमाओं को परिभाषित किया। (i) राज्य विधि द्वारा खंड 2क के उपखंड (i) से (iv) में आने वाले व्यक्तियों के नगरपालिकाओं में प्रतिनिधित्व का उपबंध कर सकता है। कानून बनाने की यह सीमित शक्ति केवल उपरोक्त दो पहलुओं पर निर्भर करती है। यह प्रत्यायोजित विधान राज्य को निर्दिष्ट सीमा से अधिक कानून बनाने की शक्ति प्रदान नहीं करता है। इस अनुच्छेद में ऐसा कुछ भी नहीं है जो सामान्य प्रकृति का समझा जा सके जो इस संबंध में राज्य द्वारा विधान की शक्ति को व्यापक दायरे में देता हो। जाहिरा तौर पर इसमें कोई बचत खंड नहीं है। एक महत्वपूर्ण विशेषता जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है वह यह है कि संविधान के अनुच्छेद 243-आर के खंड 2-ए के खंड (i) से (iv) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों के अधिकार को केवल इस अनुच्छेद के परन्तुक की भाषा द्वारा नियंत्रित नहीं कहा जा सकता है और धारा 9 को केवल उसके अनुरूप ही अधिनियमित किया जा सकता है।

(पैरा 34)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि राज्य विधानमंडल न तो प्रतिनिधित्व के प्रकार को जोड़ सकता है और न ही वह अनुच्छेद 243-आर में निर्दिष्ट की गई बातों को घटा सकता है। जिन निर्दिष्ट व्यक्तियों को मतदान के अधिकार का प्रयोग करने से प्रतिबंधित किया गया है, उन्हें राज्य द्वारा ऐसा अधिकार नहीं दिया जा सकता है और जिन व्यक्तियों को इस अधिकार का प्रयोग करने से प्रतिबंधित नहीं किया गया है, उन्हें राज्य विधानमंडल द्वारा ऐसा करने से प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है।

(पैरा 36)

आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि खंड (ii) और (iii) के अधीन विनिर्दिष्ट व्यक्ति पहले से ही बहुत बड़े निर्वाचित निकायों अर्थात i.e. के लिए निर्वाचित व्यक्ति हैं। लोक सभा, विधान सभा या राज्य की परिषदों, इन निर्दिष्ट व्यक्तियों को संविधान निर्माताओं द्वारा मतदान के अधिकार से वंचित नहीं किया गया है। इस प्रकार, यह आवश्यक निहितार्थ से होना चाहिए कि अनुच्छेद 243-आर के खंड 2-ए के (ii) और (iii) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों को समिति की बैठक में मतदान करने का अधिकार है। निर्वाचित निकाय में ऐसे व्यक्तियों का नामांकन उनके लोक सभा, विधान सभाओं और राज्य की परिषदों के निर्वाचित सदस्य होने का प्रत्यक्ष परिणाम है।

(पैरा 36)

इसके अलावा, यह स्पष्ट है कि संसद ने राज्य विधानमंडल के पक्ष में अपनी विधायी शक्तियों का त्याग करने का इरादा नहीं किया था और न ही कभी किया था।

(पैरा 37)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि धारा 9 के तहत निर्दिष्ट व्यक्ति को वोट देने का अधिकार है। एक बार जब कोई व्यक्ति किसी समिति का सदस्य हो जाता है तो उसके मतदान का अधिकार उसके लिए आवश्यक होगा जब तक कि ऐसा अधिकार विधायिका द्वारा जानबूझकर या तो विशिष्ट भाषा के उपयोग से नहीं लिया जाता है या यदि ऐसी व्याख्या आवश्यक निहितार्थ के सिद्धांत पर आवश्यक हो जाती है। हम यह देखने में असमर्थ हैं कि किस आधार पर अनुच्छेद 243 (आर) (2) ए के (ii) से (v) के तहत व्यक्तियों (समिति के सदस्यों) को मतदान के अधिकार से वंचित किया जा सकता है। वोट देने का अधिकार बहुत ही प्रकृति से समिति की उनकी सदस्यता के साथ होना चाहिए, जब तक कि इस तरह के अधिकार को किसी वैध कानून द्वारा विशेष रूप से बाहर नहीं किया जाता है। दूसरे शब्दों में "समिति के 2/3 सदस्य" पद में केवल वे सदस्य शामिल होंगे जिन्हें 31 जुलाई, 1995 को भाग लेने और मतदान करने का अधिकार है।

(पैरा 39)

इसक इसके अतिरिक्त यह अभिनिर्धारित किया गया कि हम राज्य की ओर से इस तर्क को स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हैं कि अधिनियम की धारा 9 (3) के खंड (ii) और (iii) के अधीन विनिर्दिष्ट व्यक्तियों को मतदान का अधिकार नहीं होगा। उस सीमित विस्तार का प्रावधान संवैधानिक प्रावधानों और उसके मूल ढांचे के अधिकार क्षेत्र से बाहर होगा। यह संविधान के अनुच्छेद 243-आर में निहित संवैधानिक प्रावधानों की मूल भावना का उल्लंघन करता है। मतदान का अधिकार समिति के उपरोक्त सदस्यों का एक अनिवार्य अधिकार है। इस प्रकार, यह व्याख्या के किसी भी स्वीकृत मानदंडों पर आधारित और ऐसे निर्वाचित निकायों में कार्य करने की लोकतांत्रिक प्रणाली को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए इस तरह के चुनाव की अपरिहार्य व्याख्या होगी।

(पैरा 42)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि मतदान का अधिकार किसी भी लोकतांत्रिक प्रणाली का एक अभिन्न अंग है और खंड (ii) और (iii) के तहत व्यक्ति स्पष्ट रूप से निर्वाचित व्यक्ति हैं जिन्हें बहुत बड़े निर्वाचन क्षेत्रों के लाभ के लिए अपनी भूमिका निभानी है और उच्च आधार पर नगरपालिका के मामलों में

अपने योगदान से नगरपालिका और इसकी कल्याणकारी गतिविधियों को आगे बढ़ाने की उम्मीद की जाती है।इस परंतुक के लिए कोई वैध तर्क देखने में असमर्थ है जहां तक यह इन व्यक्तियों के मतदान के अधिकार को सीमित करता है और छीन लेता है।उस हद तक अधिनियम की खंड 9 (3) के दूसरे परंतुक के इस भाग को शेष परंतुक से अलग *करने योग्य* होने के कारण संवैधानिक प्रावधानों के अधिकार अधिकारातीत माना जाना चाहिए।

(पैरा 43)

इसके अधिकारातीत यह अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम की खंड 9 का दूसरा परंतुक उस सीमा तक सीमित है जहां यह अधिनियम की खंड 9 की उप-खंड 3 के खंड (ii) और (iii) में निर्दिष्ट सदस्यों *को वर्जित* करता है और इसे कानून में कायम नहीं रखा जा सकता है।परंतुक के शेष भाग के संबंध में हम टिप्पणी करने से बचते हैं और किसी भी मामले में, परंतुक के शेष भाग को कई सिद्धांत के सिद्धांत पर सुरक्षित रूप से संरक्षित किया जा सकता है।

(पैरा 44)

इसके अलावा, यह अभिनिर्धारित किया गया कि कानूनी सिद्धांतों पर व्यापक चर्चा से जो पूरी तस्वीर सामने आती है, वह यह है कि अधिनियम की खंड 21 में उपयोग की गई "समिति के सदस्य" अभिव्यक्ति को रंग लेना चाहिए और अधिनियम की खंड 9 (3) के प्रावधानों के संयोजन के साथ पढ़ा जाना चाहिए। इन दोनों प्रावधानों की स्पष्ट रूप से संविधान के अनुच्छेद 243 (आर) में निहित संवैधानिक प्रावधानों के पूर्ण संबंध में व्याख्या और व्याख्या की जानी चाहिए।"

(पैरा 47)

इसके अलावा यह अभिनिर्धारित किया गया कि "समिति के सदस्य" शब्दों को "समिति के सदस्यों की कुल संख्या" शब्दों से अलग अर्थ दिया जाना चाहिए।

(पैरा 48)

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता राजेश गम्बर

पी. के. मुतनेजा, एडिशनल ए. जी. हरियाणा, प्रतिवादी संख्या 1 से 3 के लिए।

प्रतिवादी संख्या 4 के लिए आर. सी. सेतिया, सिद्धार्थ सरूप अधिवक्ता के साथ वरिष्ठ अधिवक्ता

जे. एस. विर्क, अधिवक्ता, प्रतिवादी संख्या 5 से 13 के लिए।

निर्णय

स्वतंत्र कुमार, जे.

(1) क्या सभी तार्किक सीमा तक लिए गए संवैधानिक प्रावधानों के तहत प्रत्यायोजित विधान के आधार पर राज्य विधानमंडल में निहित व्यापक विधायी शक्तियों को भारत के संविधान के विभिन्न अनुच्छेदों में दरार पैदा करने की अनुमति दी जानी चाहिए और इसकी मूल संरचना अन्य प्रश्नों में से एक है जो वर्तमान रिट याचिका में विचार के लिए उत्पन्न होती है?

(2) प्रत्येक अन्य कानून को संवैधानिक कानून के अनुरूप होना चाहिए और इसके अधिमान्य प्रचलन के लिए मार्ग प्रशस्त करना चाहिए। 1992 के अधिनियम द्वारा 74वें संवैधानिक संशोधन ने निर्वाचित निकायों द्वारा लोगों के मामलों के शासन को जमीनी स्तर पर लाने के लिए एक स्पष्ट विधायी आदेश के साथ अनुच्छेद 243-पी और 243-जेडजी को पेश किया। इन प्रावधानों को लागू करने के परिणामस्वरूप स्पष्ट रूप से हरियाणा नगर निगम अधिनियम, 1973 के प्रावधानों सहित कुछ राज्य कानूनों में संशोधन हुआ, जिसे इसके बाद नगर निगम अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया। इस अधिनियम के प्रावधानों में, अन्य बातों के अलावा, नगरपालिका समिति के गठन, इसके सदस्यों के चुनाव, ऐसे चुनाव को चुनौती देने और उससे उत्पन्न होने वाले अन्य सभी सहायक मामलों का प्रावधान है। लोकतंत्र की मूल विशेषता के अनुरूप, नगरपालिका समिति के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के चुनाव और उनके खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाने के लिए भी प्रावधान किए गए थे। हरियाणा अधिनियम की धारा 21 की उपधारा (3) के अधीन यह उपबंध किया गया था कि यदि समिति के कम से कम 2/3 सदस्यों के समर्थन से अविश्वास प्रस्ताव लाया जाता है तो अध्यक्ष या उपाध्यक्ष, यथास्थिति, यह समझा जाएगा कि उन्होंने अपना पद रिक्त कर दिया है। यह निर्धारित करने के लिए कि समिति के किस सदस्य को अविश्वास प्रस्ताव पर मतदान करने का अधिकार है, अधिनियम की धारा 9 के प्रावधानों के लिए अन्य प्रावधानों के बीच संदर्भ बनाया जाना चाहिए।

(3) इस अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों और उसके तहत बनाए गए नियमों को राज्य विधानमंडल द्वारा थोड़े समय में भी बार-बार संशोधन के अधीन किया गया है, विशेष रूप से अधिनियम की धारा 9 और धारा 21 1988 से बहुत हाल तक तीव्र और मौलिक संशोधनों के विषय रहे हैं। न्यायालयों द्वारा न्यायिक निर्णयों में भी बार-बार किए गए विधायी संशोधनों के परिणाम और प्रभाव स्पष्ट रूप से देखे गए। समिति के सदस्यों में से कौन अविश्वास प्रस्ताव के लिए मतदान करने का हकदार होगा, यह कुछ विवादास्पद विषयों में से एक बन गया। केवल इस प्रश्न पर न्यायिक निर्णयों में निश्चित रूप से टकराव था। मुख्य रूप से इन्हीं कारणों से इस न्यायालय

की एक खंड पीठ ने इस रिट याचिका को पूर्ण पीठ द्वारा सुनवाई के लिए स्वीकार करना उचित समझा।

(4) शुरुआत में ही हम इस न्यायालय की एक खण्ड पीठ द्वारा पारित 18 जुलाई, 1996 के आदेश का उल्लेख करना उचित समझते हैं, जो इस प्रकार हैः—

> " याचिका में हरियाणा नगर निगम अधिनियम, 1973 की धारा 21 की व्याख्या के संबंध में कानून का महत्वपूर्ण प्रश्न शामिल है, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि एक निर्वाचित अधिकारी को हटाने के उद्देश्य से, गैर-मतदान सदस्यों सहित सदस्यों की 2/3 संख्या का बहुमत गिना जाना है। चूंकि कानून का यह प्रश्न बड़ी संख्या में मामलों में शामिल है, इसलिए प्रत्यर्थियों के वकील ने सुखबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (1996 का सीडब्ल्यूपी नंबर 4590) मामले में इस अदालत की खंड पीठ के फैसले को चुनौती दी है।पूर्ण पीठ में भर्ती किया गया और 23 सितंबर, 1996 को शुरू होने वाले सप्ताह में सूचीबद्ध किया जाएगा।"

(5) इससे पहले कि हम इस महत्वपूर्ण कानूनी विवाद के विभिन्न कानूनी अंगों पर विचार करें, बुनियादी तथ्यों का संदर्भ उचित होगा। करनाल जिले में नगरपालिका समिति, इंद्री के लिए चुनाव दिसंबर, 1994 में आयोजित किया गया था और समिति का विधिवत गठन और 17 फरवरी, 1995 को अधिसूचित किया गया था। इस समिति में निर्वाचित, मनोनीत और अन्य सदस्यों सहित कुल 18 सदस्य थे। दिनांक 2 फरवरी, 1995 की अधिसूचना के माध्यम से राज्य सरकार ने धारा 9 की धारा 3 (ii) के तहत दो व्यक्तियों को नगरपालिका समिति के सदस्य के रूप में नामित किया, जबकि इसने अधिनियम की धारा 9 (3) के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए तीन सदस्यों को नामित करते हुए दिनांक 20 फरवरी, 1995 को एक और अधिसूचना जारी की। इस प्रकार, समिति के सदस्यों की कुल संख्या 13 निर्वाचित और 5 मनोनीत हैं।

(6) याचिकाकर्ता राज पाल को समिति के अध्यक्ष के रूप में चुना गया था और वे 13 जुलाई, 1995 तक इस रूप में कार्य कर रहे थे।उस तारीख को इस अधिनियम की धारा 21 (2) के तहत उप-मंडल अधिकारी (नागरिक) करनाल और आयुक्त, नगर समिति, इंद्री, श्री ए. के. यादव द्वारा विशेष बैठक बुलाई गई थी। उस दिन समिति के 16 सदस्य उपस्थित थे। बैठक में संबंधित अधिकारी द्वारा अविश्वास प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया। मतपत्र वितरित किए गए। प्रस्ताव को अविश्वास प्रस्ताव के पक्ष में 9 और विरोध में 4 मतों से पारित किया गया। संबंधित अधिकारी ने कहा कि राष्ट्रपति राज पाल के खिलाफ प्रस्ताव लाया गया था और निर्देश दिया कि सरकार को सूचित किया जाए। इस संकल्प संख्या 62 दिनांक 13 जुलाई, 1995 की प्रति रिट याचिका के साथ अनुलग्नक पी/3 के रूप में संलग्न है। इस संकल्प की सामग्री को निम्नानुसार पुनः प्रस्तुत करना प्रासंगिक होगा:-

> "उपस्थित सदस्यः श्री सुरेश कुमार भाटिया, महेश कुमार, हरबंस लाई,

रोशन लाई, अविनाश कौर, शेरी देवी, सुमिता देवी, जागीर सिंह, राजपाल, बाल कृष्ण, चरणजीत सिंह, रेशमी देवी, गिरधारी लाई, राजेंद्र कुमार, पाला राम, संत लाई। वर्तमान परामर्शदाताओं ने मत विभाजन और मतदान की मांग की। इस पर अध्यक्ष उप-मंडल अधिकारी (नागरिक) करनाल ने निर्वाचित सदस्यों को बैले पेपर वितरित किए और सभी निर्वाचित सदस्यों ने बैले पेपर का उपयोग किया। उसके बाद राष्ट्रपति ने बैले पेपरों की गिनती की और घोषणा की कि अविश्वास प्रस्ताव के पक्ष में 9 वोट और अविश्वास प्रस्ताव के खिलाफ 4 वोट पड़े हैं, इसलिए राष्ट्रपति राज पाल के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाया गया है। सरकार को सूचित किया जाए। बाल कृष्ण, संत लाई, पलाराम, राजेंद्र कुमार, गिरधारी लाई, रोशन लाई, रेशमी देवी, चरणजीत सिंह, सुमिता देवी, शेरो देवी, अविनाश कौर, जागीर सिंह, हरबंस लाई, सुरेश भाटिया, महेश कुमार। श्री ए. के. यादव, एसडीओ (सी) करनाल और आयुक्त नगरपालिका, इंद्री।"

(7) उपर्युक्त संकल्प, 13 जुलाई, 1995 के अनुलग्नक पी/3 को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि प्रस्ताव 2/3 सदस्यों के अपेक्षित बहुमत द्वारा पारित नहीं किया गया है। याचिकाकर्ता के अनुसार, समिति के 18 सदस्य हैं और सदस्यों का 2/3 बहुमत 12 पर आता है और स्वीकार किया जाता है कि प्रस्ताव 12 सदस्यों द्वारा पारित नहीं किया गया था और इस तरह प्रस्ताव दूषित था और कानून की नजर में अमान्य था। विवाद का सार और सार यह है कि समिति के 2/3 d सदस्यों के बहुमत में मनोनीत सदस्य और संसद के सदस्य और विधान सभा के सदस्य शामिल होंगे, ताकि अधिनियम की धारा 21 (3) के दायरे में एक वैध प्रस्ताव पारित किया जा सके।

(8) सुखबीर सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य के मामले में दिए गए इस न्यायालय की खंड पीठ के निर्णय ने याचिकाकर्ता के तर्क का पूरी तरह से समर्थन किया, लेकिन यह निर्णय की शुद्धता है जिस पर इस न्यायालय की एक अन्य खंड पीठ ने वर्तमान रिट याचिका में संदेह किया था, जैसा कि ऊपर पुनः प्रस्तुत संदर्भ के आदेश से स्पष्ट है। नगरपालिका अधिनियम के जिन उपबंधों का विवादग्रस्त मामले से संबंध है, उन्हें आसानी से निम्नानुसार निर्दिष्ट किया जा सकता हैः -

खंड 2 (15ए):—

"नगरपालिका का अर्थ है खंड 2ए के तहत गठित स्व/सरकार की एक संस्था जो एक नगर समिति या एक नगर परिषद या एक नगर निगम हो सकती है।

"9. नगर पालिकाओं की संरचना–

(1) खंड 2ए के तहत गठित नगर पालिकाओं में निर्वाचित सदस्यों की

संख्या कम से कम ग्यारह होगी जो नियमों द्वारा निर्धारित की जाए।

(2) उप-धारा (2) में दिए गए प्रावधानों को छोड़कर, नगरपालिका की सभी सीटों को नगरपालिका क्षेत्र के क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने गए व्यक्तियों द्वारा भरा जाएगा और इस उद्देश्य के लिए प्रत्येक नगरपालिका क्षेत्र को क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों में विभाजित किया जाएगा जिन्हें वार्ड के रूप में जाना जाएगा।

(3) क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने गए व्यक्तियों के अलावा, राज्य सरकार, आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नगरपालिका के सदस्य के रूप में निम्नलिखित श्रेणियों के व्यक्तियों को नामित करेगीः—

(i) नगरपालिका प्रशासन में विशेष ज्ञान या अनुभव रखने वाले तीन से अधिक व्यक्ति नहीं;

(ii) लोक सभा और राज्य विधानसभा के सदस्य,निर्वाचन क्षेत्र जिनमें पूरी तरह या आंशिक रूप से नगरपालिका क्षेत्र शामिल है; और

(iii) नगरपालिका क्षेत्र के भीतर निर्वाचक के रूप में पंजीकृत राज्य परिषद के सदस्यः

बशर्ते कि उपरोक्त खंड (i) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को नगरपालिका की बैठकों में मतदान करने का अधिकार नहीं होगाः

"बशर्ते कि उपरोक्त खंड (ii) और (iii) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को न तो चुनाव लड़ने का अधिकार होगा और न ही नगर समिति या नगर परिषद के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के चुनाव या निष्कासन में मतदान करने का अधिकार होगा।

बशर्ते कि नगर परिषद के मामले में कार्यकारी अधिकारी और नगर समिति के मामले में सचिव को नगर पालिका की सभी बैठकों में भाग लेने और चर्चा में भाग लेने का अधिकार होगा, लेकिन उन्हें उसमें मतदान करने का अधिकार नहीं होगा।"

"18. राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनावः— (1) प्रत्येक नगर समिति या नगर परिषद, समय-समय पर, अपने सदस्यों में से एक को ऐसी अवधि के लिए अध्यक्ष के रूप में चुनती है जो निर्धारित की जाए, और इस प्रकार निर्वाचित सदस्य नगर समिति या नगर परिषद का अध्यक्ष बन जाएगाः

बशर्ते कि नगरपालिका समिति और नगर परिषदों में अध्यक्ष का पद खंड 10 में किए गए प्रावधानों के अनुसार अनुसूचित जातियों और महिलाओं के लिए आरक्षित होगाः

बशर्ते कि यदि राष्ट्रपति का पद उनकी मृत्यु, त्यागपत्र या अविश्वास प्रस्ताव के कारण उनके कार्यकाल के दौरान खाली हो जाता है, तो शेष अवधि के लिए एक नया चुनाव उसी श्रेणी से आयोजित किया जाएगा।

(2) प्रत्येक नगर समिति या नगर परिषद भी समय-समय पर एक उपाध्यक्ष का चुनाव करेगीः

बशर्ते कि यदि उपराष्ट्रपति का पद उनकी मृत्यु, त्यागपत्र या अविश्वास प्रस्ताव के कारण उनके कार्यकाल के दौरान खाली हो जाता है, तो एक नया शेष अवधि के लिए चुनाव आयोजित किया जाएगा।

(3) उपराष्ट्रपति का कार्यकाल एक वर्ष का होगा।"

1973 के हरियाणा अधिनियम 24 की खंड 18 का संशोधन (1 मार्च, 1995 को)।

(4) मूल अधिनियम की खंड 18 में, उप-खंड (3) के लिए निम्नलिखित उप-खंड को प्रतिस्थापित किया जाएगा, अर्थात्:—

(5) उपराष्ट्रपति का कार्यकाल पाँच वर्ष की अवधि के लिए या सदस्य के रूप में पद की शेष अवधि, जो भी कम हो, के लिए होगा।"

(21) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव।— (1) राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव नियमों में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार किया जा सकता है।

(2) उपायुक्त या अतिरिक्त सहायक आयुक्त के पद से नीचे का कोई अन्य अधिकारी, जैसा कि उपायुक्त प्राधिकृत करे, नियमों में निर्धारित तरीके से, उप-धारा (1) में निर्दिष्ट प्रस्ताव पर विचार करने के लिए एक बैठक बुलाएगा और ऐसी बैठक की अध्यक्षता करेगा।

(3) यदि प्रस्ताव समिति के दो तिहाई से अधिक सदस्यों के समर्थन

से नहीं चलाया जाता है, तो अध्यक्ष या उपाध्यक्ष, जैसा भी मामला हो, को अपना पद खाली कर दिया हुआ माना जाएगा।

(4) यदि राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के खिलाफ एक साथ या अन्यथा अविश्वास प्रस्ताव पारित किया जाता है, तो उस क्षेत्र का उप-मंडल अधिकारी (नागरिक) जिसमें नगरपालिका स्थित है या कोई अन्य अधिकारी जो उपायुक्त द्वारा अधिकृत अतिरिक्त सहायक आयुक्त के पद से कम नहीं है, अब से प्रयोग करेगा।राष्ट्रपति की शक्तियों और कार्यों का निर्वहन तब तक किया जाता है जब तक कि राष्ट्रपति का चुनाव (हटा दिया गया) अधिसूचित नहीं किया जाता है या उपराष्ट्रपति का चुनाव नहीं किया जाता है।

(5) उप-धारा (2) में निर्दिष्ट बैठक होगी उपायुक्त या उसके द्वारा प्राधिकृत अधिकारी की अध्यक्षता में, लेकिन न तो उसे और न ही ऐसे अधिकारी को ऐसी बैठक में मतदान करने का अधिकार होगा।

27. कोरम।—(1) एक समिति की विशेष बैठक में कार्य के लेन-देन के लिए आवश्यक गणपूर्ति उस समय वास्तव में सेवारत समिति के सदस्यों की संख्या का आधा होगा, लेकिन तीन से कम नहीं होगा।

2.) समिति की किसी भी सामान्य बैठक में कार्य के लेन-देन के लिए आवश्यक गणपूर्ति समिति के सदस्यों की ऐसी संख्या या अनुपात होगी जो समय-समय पर उपनियमों द्वारा निर्धारित की जाए, लेकिन तीन से कम नहीं होगीः

बशर्ते कि, यदि किसी समिति की विशेष बैठक के किसी साधारण सत्र में कोरम उपस्थित नहीं होता है, तो अध्यक्ष बैठक को ऐसे अन्य दिन के लिए स्थगित कर देगा जो वह उचित समझे, और वह कार्य जो मूल बैठक के समक्ष लाया जाता, यदि कोरम उपस्थित होता, तो स्थगित बैठक से पहले लाया जाएगा, और उसमें लेनदेन किया जाएगा, चाहे वहां कोरम मौजूद हो या न हो।

29. बहुमत का वोट निर्णायक होता है।—इस अधिनियम या नियमों के अलावा, समिति की किसी भी बैठक से पहले आने वाले सभी प्रश्नों का निर्णय उपस्थित सदस्यों के बहुमत से किया जाएगा और मतों की समानता के मामले में, बैठक के अध्यक्ष के पास दूसरा या निर्णायक मत होगा।

(9) यह पक्षकारों का एक स्वीकृत मामला है कि हरियाणा नगर निगम

अधिनियम में संशोधन, विशेष रूप से, खंड 9 (3), नियम 72-ए में दूसरे परंतुक की शुरूआत और खंड 21 का संशोधन याचिकाकर्ता के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव पारित होने की तारीख 15 जुलाई, 1995 के बाद किया गया था, जो दिनांक 13 जुलाई, 1995 है।

(10) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने डॉ. हरभजन सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य, और ज्ञान चंद कालरा बनाम हरियाणा राज्य और अन्य (3) के मामले में इस न्यायालय की खंड पीठ के निर्णयों और जेथेलाल शाह बनाम मोहन लाई भगवानदास और अन्य के मामले में दिए गए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा करते हुए तर्क दिया कि ये सभी संशोधन किसी भी तरह से सदस्यों/राष्ट्रपति के मौजूदा अधिकार को प्रभावित नहीं करेंगे क्योंकि संशोधन को उनकी प्रकृति और संचालन में पूर्वव्यापी नहीं कहा जा सकता है और चुनौती के तहत प्रस्ताव को वैधता नहीं देगा।

(11) दूसरी ओर राज्य के विद्वान वकील ने चानन सिंह और अन्र बनाम श्रीमती जय कौर के मामले पर भरोसा करते हुए तर्क दिया कि संशोधित कानून याचिकाकर्ता के मामले में लागू होगा क्योंकि इस तरह के संशोधनों को अनिवार्य रूप से उनकी प्रकृति में पूर्वव्यापी समझना होगा।

(12) यह यह कानून का एक स्थापित नियम है कि आम तौर पर मूल कानून में संशोधन को उनकी प्रकृति में संभावित माना जाना चाहिए, जब तक कि अन्यथा प्रावधानों में विशेष रूप से प्रदान नहीं किया जाता है या आवश्यक निहितार्थ के सिद्धांतों पर इस तरह से व्याख्या नहीं की जाती है। भारत के संविधान के अनुच्छेद 243-आर के तहत, केवल अधिनियम की धारा 9 (3) (i) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों को ही मतदान के अधिकार से वंचित किया गया था। इसी प्रकार द्वितीय परंतुक और नियम 72-क के प्रवर्तन से पूर्व, अधिनियम की धारा 9 (3) की उपधारा (3) के खंड (ii) और (iii) के अधीन नामनिर्देशित सदस्यों को मत देने और समिति की कार्यवाहियों अर्थात् i.e. में प्रभावी रूप से भाग लेने का अधिकार था। मतदान का अधिकार, इसलिए, यह मूल्यवान और वैध अधिकार संशोधन से पहले सदस्यों के लिए उपलब्ध था। इसके अलावा, अविश्वास प्रस्ताव को पारित करने के लिए अनिवार्य प्रावधानों द्वारा एक निश्चित प्रक्रिया प्रदान की गई थी। इन प्रावधानों में कुछ संशोधन किए गए थे। इन संशोधनों का प्रभाव इस तरह की मूल प्रक्रिया को न केवल मौजूदा प्रणाली के लिए बल्कि समिति के सदस्यों के पूर्वाग्रह के लिए भी पूर्वाग्रह में बदलने का था। प्रस्ताव संशोधन की तारीख से पहले पारित किया गया था और जहां तक समिति का संबंध था, वह अंतिम रूप ले चुका था। इन प्रावधानों में ऐसा कुछ भी नहीं था जो आवश्यक रूप से यह सुझाव देता हो कि संशोधित प्रावधानों का संचालन उस अर्थ में पूर्वव्यापी होना चाहिए। न ही अधिनियम की योजना द्वारा इस तरह के दृष्टिकोण की आवश्यकता है। वर्तमान अधिकार जिसने अंतिमता प्राप्त कर ली है, उस संबंध में एक विशिष्ट विधायी शक्ति को पारित किए बिना नहीं लिया जा सकता है।

(13) डॉ. हरभजन सिंह के मामले में और ज्ञान चंद (उपर्युक्त) के मामले में इस न्यायालय की खंड पीठों ने विस्तृत चर्चा के बाद उस याचिका में याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए तर्क को बरकरार रखा। माननीय डिवीजन बेंच ने समान स्थिति पर विचार करते हुए मैसर्स पंजाब टिन सप्लाई कंपनी चंडीगढ़ आदि बनाम केंद्र सरकार और अन्य पर भरोसा किया।

(14) इस स्तर पर, जेथेलाल शाह बनाम मोहन लाई भगवानदास और एक अन्य (7) और मिथलेश कुमार और एक अन्य बनाम प्रेम बिहारी *खरे (8)* के *मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय* के फैसलों *का संदर्भ देना उचित* हो *सकता है।मिथीलेश कुमार* और एक अन्य मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार निर्णय दियाः—

> " इसलिए, किसी कानून को पूर्वव्यापी कार्रवाई नहीं दी जानी चाहिए ताकि प्रक्रिया के मामले के संबंध में मौजूदा अधिकार या दायित्व को बाधित किया जा सके, जब तक कि उस प्रभाव को अधिनियम की भाषा के साथ हिंसा किए बिना टाला नहीं जा सकता है। किसी क़ानून को पूर्वव्यापी रूप से लागू करने से पहले न्यायालय को संतुष्ट होना चाहिए कि क़ानून वास्तव में पूर्वव्यापी है। पूर्वव्यापी संचालन के खिलाफ धारणा उन मामलों में मजबूत है जिनमें क़ानून, यदि पूर्वव्यापी रूप से संचालित किया जाता है, तो निहित अधिकारों या पिछले लेनदेन की अवैधता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगा, या अनुबंधों को प्रभावित करेगा, या नया शुल्क लगाएगा या पिछले लेनदेन या पहले से पारित विचार के संबंध में नई अक्षमता संलग्न करेगा।

(15) हम काका बनाम हुसैन बानो के मामले में इस न्यायालय के हाल ही में पारित पूर्ण पीठ के फैसले का भी उल्लेख कर सकते हैं और एक अन्य जहां पीठ ने इस बात की जांच की कि क्या मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) अधिनियम, 1986 के प्रावधान पूर्वव्यापी थे और यदि हां तो किस हद तक और निम्नलिखित रूप में आयोजित विभिन्न निर्णयों पर विचार करने के बादः-

> " जहां विधानमंडल विधि को पूर्वव्यापी रूप से लागू करना चाहता है वहां विधानमंडल की ओर से उस संबंध में विशेष रूप से अधिनियमित करना या ऐसी भाषा का उपयोग करना अनिवार्य है जो अधिनियम की योजना में न्यायालयों के लिए ऐसा निष्कर्ष निकालना अनिवार्य बनाती है। यह आवश्यकता अधिक प्रमुख है जहां इरादा सक्षम क्षेत्राधिकार के न्यायालयों के निर्णयों से उत्पन्न स्थायी और निहित अधिकारों के तहत लाभ प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को अलग करना है। इस अधिनियम या इस तरह के किसी भी कानून के किसी भी प्रावधान को हमारे संज्ञान में नहीं लाया गया है या लाया गया है, जो हमें यह मानने के लिए राजी कर सकता है कि यह अधिनियम अपने संचालन में पूर्वव्यापी है और वह भी निहित अधिकारों को विभाजित

करने की सीमा तक।

> सामान्य नियम के तार्किक परिणाम के रूप में, उस पूर्वव्यापी कार्रवाई को तब तक अभिप्रेत नहीं माना जाता है जब तक कि वह मंशा व्यक्त शब्दों या आवश्यक निहितार्थ द्वारा प्रकट नहीं की जाती है, इस प्रभाव के लिए एक अधीनस्थ नियम है कि एक क़ानून या उसमें एक धारा का अर्थ इस तरह से नहीं लगाया जाना चाहिए कि इसकी भाषा से अधिक व्यापक पूर्वव्यापी कार्रवाई हो।

(16) कानून की उपरोक्त तय स्थिति को देखते हुए, "हम काका के मामले में इस अदालत की पूर्ण पीठ और डॉ. हरभजन सिंह और ज्ञान चंद कालरा के मामलों में डिवीजन बेंच द्वारा लिए गए दृष्टिकोण के साथ सम्मानजनक सहमति में हैं। हमारा मानना है कि इन प्रावधानों का इस अर्थ में पूर्वव्यापी प्रभाव नहीं है कि यह संशोधनों से पहले पारित प्रस्ताव की वैधता या अन्यथा को प्रभावित कर सकता है।

(17) इस इस समय, यह ध्यान रखना फायदेमंद होगा कि अधिनियम की धारा 9 के प्रावधान विभिन्न संशोधनों के अधीन थे। धारा 9 के प्रावधानों को पुनरुत्पादित के रूप में पढ़ा जाता है। यह संशोधन 1995 के संशोधन अधिनियम 3 द्वारा किया गया था जिसे 14 अप्रैल, 1995 को राज्यपाल की मंजूरी मिली थी। इस धारा को 8 दिसंबर, 1995 को फिर से संशोधित किया गया था। विचाराधीन प्रस्ताव, जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, 13 जुलाई, 1995 को पारित किया गया था। विधि की उपर्युक्त स्थिर स्थिति को ध्यान में रखते हुए, जिसके तर्क को हम समवर्ती रूप से अपनाते हैं, 13 जुलाई, 1995 के बाद के संशोधनों का वर्तमान मामले में विवाद पर कोई ठोस प्रभाव नहीं होगा। हम यहां यह भी देख सकते हैं कि हरियाणा नगरपालिका नियम 1978 के नियम 72-ए को पहली बार 13 सितंबर, 1995 की अधिसूचना के माध्यम से प्रस्तुत किया गया था। चूंकि इस नियम में दिए गए ऐसे संकल्प को अस्वीकार करने या लागू करने की प्रक्रिया वर्तमान मामले पर लागू नहीं होगी।

(18) हमारे सामने उत्तरदाताओं की ओर से यह तर्क है कि इन बाद के संशोधनों ने इस मुद्दे को विवाद में डाल दिया है और प्रस्ताव को आवश्यक बहुमत के साथ पारित किया गया माना जाएगा।

(19) याचिकाकर्ता की ओर से उठाए गए तर्कों का प्रतिवाद करते हुए, राज्य और अन्य प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील का तर्क है कि यह निर्वाचित सदस्यों (वर्तमान मामले में 13) का 2/3 बहुमत है जिसे राष्ट्रपति या

उपराष्ट्रपति के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव के भाग्य का निर्धारण करना है। यह तर्क दिया जाता है कि 13 निर्वाचित सदस्यों में से 2/3 सदस्य 9 होंगे, इसलिए संबंधित अधिकारी ने सही निष्कर्ष निकाला है कि अविश्वास प्रस्ताव पारित किया गया था।

(20) हम पहले ही स्पष्ट रूप से देख चुके हैं कि भारत के संविधान में 74वें संशोधन का नगरपालिकाओं की संरचनाओं और कार्यों पर प्रत्यक्ष और भौतिक प्रभाव पड़ता है।इसने नगर पालिकाओं की भूमिका और राज्य प्रशासन में उनके महत्व को नए आयाम दिए थे।

(21) भारत के संविधान के कुछ प्रासंगिक अनुच्छेदों का संदर्भ राज्य विधानमंडल को उनके संबंध में कानून बनाने की शक्तियों पर 74वें संवैधानिक संशोधन के प्रभाव की सीमा का विश्लेषण करने के लिए आवश्यक होगा।

(22) "इस संबंध में राज्य विधान को सुरक्षित रूप से एक अधीनस्थ विधान के बराबर माना जा सकता है और कोई भी निर्दिष्ट विधान राज्य विधान को सशक्त बनाने वाले अधिनियम के प्रावधानों के अनुरूप होना चाहिए।"

(23) अनुच्छेद 243 पी (ई) के तहत भारत के संविधान ने अधिनियम की धारा 2 (15 ए) के समान भाषा में नगर पालिका को परिभाषित किया है। यह उस क्षेत्र के व्यक्तियों की जरूरतों को नियंत्रित करने के लिए स्वशासन की एक संस्था है जिसके लिए ऐसी नगरपालिका का गठन किया गया है। नगरपालिका समिति के गठन का जनादेश अनुच्छेद 243Q में स्पष्ट रूप से नहीं देखा गया है। अनुच्छेद 243 आर और 243 जेडएफ भारत के संविधान के अन्य अनुच्छेद हैं जिनके लिए इस स्तर पर संदर्भ की आवश्यकता होगी क्योंकि उनका हमारे सामने विवाद में मामले पर सीधा असर हैः—

> "243आर. नगर पालिकाओं की संरचना।—(1) खंड (2) में दिए गए प्रावधान को छोड़कर, नगर पालिका में सभी सीटें क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों से प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने गए व्यक्तियों द्वारा भरी जाएंगी।नगरपालिका क्षेत्र और इस उद्देश्य के लिए प्रत्येक नगरपालिका क्षेत्र को विभाजित किया जाएगा।
>
> वार्ड के रूप में जाने जाने वाले क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों में।

(2) किसी राज्य का विधानमंडल विधि द्वारा निम्नलिखित उपबंध कर सकता है -

- (a) नगरपालिका में प्रतिनिधित्व के लिए -
  - (i) नगरपालिका प्रशासन में विशेष ज्ञान या अनुभव रखने वाले *व्यक्ति;*
  - (ii) लोक सभा के सदस्य और राज्य की विधानसभा के सदस्य जो उन निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें पूरी तरह या आंशिक रूप से नगरपालिका क्षेत्र शामिल है;
  - (iii) नगरपालिका क्षेत्र के भीतर निर्वाचक के रूप में पंजीकृत राज्य परिषद के सदस्य और राज्य विधान परिषद के

सदस्य;

(iv) अनुच्छेद 243 एस के खंड (5) के तहत गठित समितियों के अध्यक्षः

बशर्ते कि पैराग्राफ (i) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को नगर पालिका की बैठकों में मतदान करने का अधिकार नहीं होगाः

(b) नगरपालिका के अध्यक्ष के चुनाव का तरीका।

243ZF विद्यमान विधियों और नगर पालिकाओं का बने रहना-इस भाग में किसी बात के होते हुए भी, संविधान (74वां संशोधन) अधिनियम, 1992 के प्रारंभ से ठीक पहले किसी राज्य में प्रवृत्त नगर पालिकाओं से संबंधित किसी भी कानून का कोई प्रावधान, जो इस भाग के प्रावधानों के साथ असंगत है, किसी सक्षम विधानमंडल या अन्य सक्षम प्राधिकारी द्वारा संशोधित या निरस्त किए जाने तक या ऐसे प्रारंभ से एक वर्ष की समाप्ति तक, जो भी पहले हो, तब तक लागू रहेगाः

बशर्ते कि ऐसे प्रारंभ से तुरंत पहले मौजूद सभी नगरपालिकाएं अपनी अवधि की समाप्ति तक बनी रहेंगी, जब तक कि उस राज्य की विधानसभा द्वारा या विधान परिषद वाले राज्य की स्थिति में, उस राज्य के विधानमंडल के प्रत्येक सदन द्वारा उस प्रभाव के लिए पारित प्रस्ताव द्वारा जल्द ही भंग नहीं किया जाता है।"

(24) अब सबसे पहले हम वनाच्छादित प्रावधानों में निहित विधायी योजना पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ेंगे और फिर हमारे सामने विवादग्रस्त विषय के संबंध में संवैधानिक प्रावधानों के प्रभाव पर चर्चा करेंगे। धारा 9 नगरपालिका समितियों के गठन का प्रावधान करती है। इसमें धारा 9 की उपधारा (1) के तहत निर्वाचित सदस्य शामिल होने चाहिए। उनकी संख्या राज्य द्वारा निर्धारित की जा सकती थी, लेकिन किसी भी स्थिति में 11 निर्वाचित सदस्यों से कम नहीं होगी। धारा 9 की उपधारा (2) में यह उपबंध है कि नगरपालिका की सभी सीटों को प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने गए व्यक्तियों द्वारा भरा जाएगा, सिवाय इसके कि उपधारा में उपबंध किया गया है। (3). धारा 9 की उपधारा (3) में यह उपबंध है कि प्रादेशिक निर्वाचन क्षेत्र से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने गए व्यक्तियों के अतिरिक्त राज्य सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा खंड (i) (ii) के अधीन विनिर्दिष्ट व्यक्तियों की श्रेणियों को नामित करेगी और (iii). नगरपालिका प्रशासन का विशेष ज्ञान या अनुभव रखने वाले तीन से अधिक व्यक्ति, लोक सभा और राज्य की विधान सभा के सदस्य और राज्य की परिषदों के सदस्य। दूसरे शब्दों में, नगरपालिका में न्यूनतम 11 निर्वाचित सदस्य, तीन नामित सदस्य और दो अन्य सदस्य होने चाहिए जो विधानसभा या संसद के लिए निर्वाचित सदस्य हों।

(25) धारा (9) का प्रावधान नामित व्यक्तियों को नगरपालिका की बैठक में

मतदान के किसी भी अधिकार का प्रयोग करने से पूरी तरह से प्रतिबंधित करता है। इसका मतलब है कि उन्हें समिति द्वारा बुलाई गई विशेष या साधारण बैठक में मतदान करने का कोई अधिकार नहीं है। उनके कार्य मुख्य रूप से इसके वास्तविक दायरे और दायरे में सलाहकार और सूचक प्रतीत होते हैं। वे ऐसे व्यक्ति हैं जिनसे निर्वाचित निकाय को सुचारू रूप से कार्य करने में मदद करने और राज्य द्वारा अपने प्रशासन में अपनाए गए विभिन्न तरीकों को ऐसे निकाय के ध्यान में लाने की अपेक्षा की जाती है। धारा 9 की उपधारा 3 का दूसरा परंतुक सबसे पहले 1988 के संशोधन द्वारा हटा दिया गया था, लेकिन 1988 के संशोधन अधिनियम संख्या 3 द्वारा जोड़ा गया था, लेकिन 1989 के संशोधन अधिनियम संख्या 15 द्वारा फिर से हटा दिया गया था और 1994 के संशोधन अधिनियम 3 द्वारा फिर से जोड़ा गया था, जहां पूरी धारा 9 को इसकी अधिसूचना की तारीख यानी 5 अप्रैल, 1994 से प्रभावी बनाया गया था। नए जोड़े गए खंड को हमारे द्वारा ऊपर संदर्भित किया गया है।

(26) विधानमंडल ने 17 अप्रैल, 1995 की अधिसूचना के माध्यम से धारा 9 में दूसरा परंतुक प्रस्तुत करते हुए यह प्रावधान किया कि खंड (ii) और (iii) में निर्दिष्ट नामित सदस्यों को भी खंड के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों के बराबर रखा जाए (i). दूसरे शब्दों में, वे चुनाव में मतदान के अधिकार और राष्ट्रपति को हटाने से भी वंचित थे। उन्हें नगरपालिका के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष का चुनाव लड़ने से रोक दिया गया था। अधिनियम के अन्य प्रासंगिक प्रावधानों से पता चलता है कि नगरपालिका अधिनियम की धारा 2ए के तहत गठित स्वशासन की एक संस्था है। धारा 2क के अधीन इस प्रकार गठित नगरपालिका में निर्वाचित सदस्यों की ऐसी संख्या होगी जो नियमों द्वारा विहित 11 से कम न हो। निर्वाचित सदस्यों के अलावा, नामित सदस्यों को धारा 9 की उप-धारा (3) के तहत वर्गीकृत किया जाता है। मनोनीत सदस्यों के अधिकार सीमित हैं। अध्यक्ष को समिति के सदस्यों से उसमें निर्धारित अवधि के लिए चुना जाना होता है। धारा 21 के तहत राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव नियमों में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार पेश किया जा सकता है। जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं कि नियमों के नियम 72ए को शामिल करके उक्त नियमों के संशोधन से पहले नियमों के तहत कोई प्रक्रिया प्रदान नहीं की गई थी। इस प्रकार, वर्तमान मामले में, हमें इस आधार पर आगे बढ़ना होगा कि अधिनियम की धारा 21 स्वयं अविश्वास प्रस्ताव की शुरूआत, इसके मतदान और इसके परिणाम के संबंध में पूरी प्रक्रिया को नियंत्रित करती है। धारा 21 (3) के अधीन यदि समिति के कम से कम 2/3 सदस्यों के समर्थन से प्रस्ताव पारित किया जाता है तो अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को, यथास्थिति, उनके पद से हटा दिया गया समझा जाएगा। उस स्थिति में, उपायुक्त या इस तरह से सशक्त या अधिकृत व्यक्ति राष्ट्रपति की सभी शक्तियों और कार्यों का प्रयोग करेगा। धारा 27 समिति के कामकाज के लेन-देन के लिए आवश्यक गणपूर्ति को संदर्भित करती है। यह उपबंध करता है कि विशेष बैठक का कोरम उस समय वास्तव में सेवारत सदस्यों की संख्या के 1/2 का होगा, लेकिन यह 3 से कम नहीं होगा, जबकि साधारण बैठक के मामले में कोरम समिति के सदस्यों की ऐसी संख्या होगी जो उपनियमों के अधीन उपबंधित की जाए, लेकिन 3 से कम नहीं। अधिनियम की धारा 29 के तहत, निर्णय

बहुमत से लिया जाना है। धारा 29 के तहत उपयोग की गई अभिव्यक्ति सभी उपस्थित सदस्य हैं।

(27) इन प्रावधानों और इस अधिनियम की योजना को व्यापक रूप से देखने पर समिति के निर्वाचित सदस्यों और समिति के नामित सदस्यों के बीच स्पष्ट अंतर पता चलता है। अधिनियम की धारा 9 (3) के तहत निर्दिष्ट सभी तीन श्रेणियों को वोट देने का कोई अधिकार नहीं है और वास्तव में इस धारा के संशोधित प्रावधानों के अनुसार, उन्हें राष्ट्रपति के रूप में चुने जाने या अविश्वास प्रस्ताव में वोट देने का कोई अधिकार नहीं है। हम जल्द ही 1995 के संशोधित अधिनियम संख्या 3 और अन्य संशोधनों के प्रभाव पर चर्चा करेंगे।

(28) प्रासंगिक समय पर, जब विवादित संकल्प दिनांक 13 जुलाई, 1995 पारित किया गया था, अधिनियम की धारा 21 एकमात्र वैधानिक प्रावधान था जो उक्त प्रावधान के अनुसार पेश की गई अविश्वास प्रस्ताव की पूरी प्रक्रिया और निर्णय लेने की प्रक्रिया को नियंत्रित करता था। धारा 21 की उपधारा (3) के अधीन ऐसा प्रस्ताव समिति के कम से कम 2/3 सदस्यों द्वारा किया जाना चाहिए। इस प्रकार समिति के सदस्यों की अभिव्यक्ति को एक निश्चित और स्पष्ट अर्थ दिया जाना चाहिए। क्या अभिव्यक्ति "समिति के 2/3 सदस्य" में समिति के सभी 18 सदस्य शामिल होंगे i.e. अन्य नामित सदस्यों को छोड़कर, निर्वाचित और नामित सदस्य या समिति के केवल सीधे निर्वाचित सदस्य होंगे। एक अन्य दृष्टिकोण जिसकी न्यायालय को जांच करनी है, वह यह है कि क्या अधिनियम की धारा 9 (3) के खंड (ii) और (iii) में यह अभिव्यक्ति, उसी धारा के खंड (i) के तहत निर्दिष्ट सदस्यों को इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि धारा 9 (3) (i) के तहत निर्दिष्ट सदस्य को भारत के संविधान के अनुच्छेद 243-आर के खंड (2) के उपखंड (i) के साथ-साथ अधिनियम के वैधानिक प्रावधानों के तहत भी वोट के अधिकार से वंचित कर दिया गया है, को छोड़कर होगी। इसलिए, न्यायालय को अधिनियम की योजना, विधायी आशय और इन प्रावधानों द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य को ध्यान में रखना चाहिए, ताकि इस अभिव्यक्ति का उचित अर्थ ज्ञात किया जा सके। निर्वाचित और मनोनीत सदस्यों की भूमिका के बीच का अंतर उपरोक्त प्रावधानों की भाषा से स्पष्ट है। अधिनियम की योजना से संचालन, कार्यों और जिम्मेदारियों का विच्छेद योग्य क्षेत्र स्पष्ट है। इस निर्वाचित निकाय के कार्यकरण को उसके प्रभावी कार्य में अधिनियम की धारा 9 (3) (i) के अधीन विनिर्दिष्ट मनोनीत व्यक्तियों के हस्तक्षेप से मुक्त रखने का विधानमंडल का इरादा इस तथ्य से स्पष्ट है कि उन्हें मतदान के अधिकार से वंचित किया गया है। इस तरह का अवरोध संवैधानिक प्रावधानों के तहत विशिष्ट होने के साथ-साथ राज्य अधिनियम में इसके अनुरूप होने के कारण कुछ नामित सदस्यों के विशेषाधिकारों की भूमिका और दायरे को सीमित करने वाले कानून के उद्देश्यों को वास्तव में व्यक्त करता है।

(29) हमारे विचार में समिति के सदस्यों की अभिव्यक्ति समिति के उन सदस्यों को संदर्भित करनी चाहिए जिन्हें मतदान के अधिकार के साथ इस उद्देश्य के लिए बुलाई गई समिति की विशेष बैठक में प्रभावी रूप से भाग लेने का

अधिकार है। इस अधिनियम के प्रावधानों के साथ-साथ पूर्व-इंगित संवैधानिक प्रावधान ऐसी बैठकों में मतदान के अधिकार को प्रतिबंधित करते हैं या आवश्यक निहितार्थ द्वारा प्रदान करते हैं। मतदान का अधिकार निर्वाचित निकायों में कार्य करने की लोकतांत्रिक प्रणाली की नींव है। न्यायालय को समिति के सदस्यों की अभिव्यक्ति को एक निश्चित अर्थ देने के लिए इस अधिनियम के अन्य प्रावधानों में विधायिका द्वारा उपयोग की गई इसी तरह की अन्य अभिव्यक्ति पर विचार करना होगा। निर्वाचित सदस्य, सदस्य के रूप में व्यक्ति, समिति के सदस्य, वास्तव में कार्यरत और विभिन्न प्रावधानों में उपस्थित होने वाले सदस्यों की अभिव्यक्ति पर संक्षिप्त दृष्टिकोण अधिनियम की धारा 21 (3) में दिखाई देने वाले समिति के अभिव्यक्ति सदस्यों को सीमित करने के लिए विधायी इरादे को दर्शाता है, जिन्हें भागीदारी, विचार और वोट देने का अधिकार है। यदि कोई भी सामग्री गायब है, तो यह तुरंत संदेह पैदा करेगा कि क्या ऐसा सदस्य आवश्यक संख्या का हिस्सा बनने का हकदार है या नहीं।

(30) अधिनियम के प्रावधानों में अंतर्निहित भाषा, भावना और सार को ध्यान में रखते हुए समिति के सदस्यों की अभिव्यक्ति उन सदस्यों को इंगित और शामिल करेगी, जिन्हें समिति के कामकाज में प्रभावी ढंग से भाग लेने का अधिकार है और महत्वपूर्ण महत्व के मामलों के संबंध में इसकी निर्णय लेने की प्रक्रिया को भौतिक रूप से प्रभावित करते हैं। उन व्यक्तियों को शामिल करना जो केवल समिति को सलाह देने वाले हैं और जिनकी निर्णय लेने की प्रक्रिया में प्रभावी भागीदारी और वोट देने का अधिकार हमारे विचार में क़ानून द्वारा विशेष रूप से वर्जित किया गया है, वैध रूप से समिति के सदस्यों की संख्या का हिस्सा नहीं बन सकता है, जो अधिनियम की धारा 21 के तहत प्रस्तुत अविश्वास प्रस्ताव के भाग्य का फैसला करेंगे। धारा 9 की उपधारा (3) के खंड (i) के तहत समिति के सदस्यों के रूप में नामित व्यक्ति वे व्यक्ति हैं जिन्हें नगरपालिका के प्रशासन में उनके विशेष ज्ञान या अनुभव के कारण इस प्रकार नामित किया जाता है। उन्हें उसी उपखंड के पहले प्रावधान के तहत मतदान करने का कोई अधिकार नहीं होगा। अविश्वास प्रस्ताव को समिति का केवल प्रशासनिक कार्य नहीं कहा जा सकता है। वास्तव में यह एक ऐसा प्रश्न है जो निर्वाचित निकाय के संविधान और कार्यों के मूल में जाता है और इसके परिणामों को समिति के सामान्य और नियमित कार्य या प्रशासनिक निर्णयों के बराबर नहीं माना जा सकता है।

(31) लोकतांत्रिक और प्रगतिशील तरीके से समिति के निर्वाचित सदस्यों द्वारा स्वशासन इन समितियों के गठन का आधार है। अध्यक्ष किसे होना चाहिए या किसी निर्वाचित अध्यक्ष ने सदन का विश्वास खो दिया है या नहीं, यह समिति के सदस्यों को तय करना होगा। किसी को समिति के अध्यक्ष के रूप में बने रहना चाहिए या नहीं, यह उन व्यक्तियों द्वारा तय किया जाना चाहिए और किया जाना चाहिए जिनकी इस प्रक्रिया में प्रभावी भूमिका निभाने और मतदान करने का अधिकार है। इस श्रेणी के अंतर्गत आने वाले व्यक्तियों को अधिनियम की धारा 21 (3) के प्रयोजन के लिए समिति का सदस्य नहीं कहा जा सकता है। धारा 9 की उपधारा (3) के खंड (ii) और (iii) के अधीन आने वाले व्यक्तियों की स्थिति के संबंध

में हम इस अधिनियम के प्रावधानों पर संवैधानिक संशोधनों के प्रभाव पर चर्चा करने के बाद शीघ्र ही इस प्रश्न पर लौटेंगे।

(32) दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने अधिनियम की धारा 9 और उसके तहत बनाए गए नियमों के नियम 72-ए पर अधिक जोर देने के साथ अन्य संशोधित प्रावधानों का संदर्भ दिया। मूल निर्भरता को अधिनियम की धारा 9 की उपधारा 3 के परंतुक 2 पर रखा गया है जिसे फिर से संदर्भित किया जा सकता है और निम्नानुसार पढ़ा जा सकता हैः-

> "बशर्ते कि उपरोक्त खंड (ii) और (iii) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को न तो चुनाव लड़ने का अधिकार होगा और न ही नगर समिति या नगर परिषद के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के चुनाव या निष्कासन में मतदान करने का अधिकार होगा।

(33) राज्य की ओर से यह तर्क दिया जाता है कि खंड (ii) और (iii) में निर्दिष्ट सदस्यों को संशोधित कानून के तहत मतदान करने का अधिकार नहीं है। इस प्रकार, अधिनियम की धारा 21 (3) के तहत अपेक्षित बहुमत के साथ अविश्वास प्रस्ताव लाया गया था। आगे यह तर्क दिया जाता है कि 18 सदस्य हैं जिनमें से 5 सदस्यों को मतदान करने का अधिकार नहीं है, जिससे सदस्यों की कुल संख्या 13 रह जाती है, जिसमें से 2/3 9 से कम है। चूंकि प्रस्ताव के पक्ष में 9 और विरोध में 4 मतों से प्रस्ताव पारित किया गया था, इसलिए प्रस्ताव को वैध रूप से पारित माना जाएगा। दूसरी ओर, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क दिया कि पुराने कानून के तहत भी अविश्वास प्रस्ताव को कानून के अनुसार नहीं लाया गया है। उनके अनुसार, समिति में 18 सदस्य हैं, जिनमें से 2/3 सदस्य 12 होंगे। प्रस्ताव के पक्ष में 9 मत पड़े। इस प्रकार, प्रस्ताव को असंशोधित प्रावधानों के तहत विफल माना जाएगा। विद्वान वकील ने आगे तर्क दिया कि समाधान की तारीख के बाद के संशोधनों का कोई परिणाम नहीं है और इस न्यायालय द्वारा विवाद का निर्धारण करने के उद्देश्य से इस पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। यह भी तर्क दिया जाता है कि यदि संशोधित प्रावधानों को ध्यान में रखा जाता है, तो भी अधिनियम की धारा 9 की उपधारा 3 के खंड (ii) और (iii) के तहत व्यक्तियों के मतदान के अधिकार को राज्य विधानमंडल द्वारा नहीं लिया जा सकता है क्योंकि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 243 आर के प्रावधानों के तहत इस तरह से संरक्षित है। जैसा कि हम पहले ही देख चुके हैं कि इस तरह के कानून में संशोधन संभावित होगा और संशोधन से पहले की गई समिति की कार्रवाई या निर्णय को प्रतिकूल रूप से प्रभावित नहीं करेगा। हम निर्णय के आधार पर इस दृष्टिकोण की पुष्टि करते हैं और इन सभी संशोधनों को उनके संचालन में संभावित के रूप में माना जाना चाहिए न कि पूर्वव्यापी। वे समिति के सदस्यों के मौजूदा अधिकार को इसके पूर्वव्यापी या पूर्वव्यापी संचालन द्वारा पूर्वाग्रहपूर्ण रूप से प्रभावित नहीं कर सकते हैं। इसलिए, हम माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय और इस न्यायालय के निर्णय के आलोक में यह अभिनिर्धारित करते हैं कि हरियाणा नगरपालिका अधिनियम के संशोधित उपबंधों का इस हद तक कोई पूर्वव्यापी प्रवर्तन नहीं होगा कि ऐसे संशोधन सदस्यों

के मौजूदा अधिकारों को समाप्त या अमान्य नहीं करेंगे, या संशोधन से पहले समिति द्वारा किए गए कार्यों या निर्णयों को प्रतिकूल रूप से, ऐसे उपबंध संशोधन की तारीख से संभावित रूप से प्रभावी होंगे। हमारा विचार है कि इन प्रावधानों को पूर्वव्यापी प्रभाव देकर अधिकारों को समाप्त करने और कार्यों को अमान्य करने का विधानमंडल द्वारा संशोधित प्रावधानों में दूर से भी संकेत नहीं दिया गया है। उस सीमित सीमा तक, हम डॉ. हरभजन सिंह और ज्ञान चंद कालरा के मामलों में इस न्यायालय की खंड पीठ द्वारा व्यक्त किए गए विचार की पुष्टि करेंगे। फिर भी अब हम संशोधित प्रावधानों की वैधता या अन्यथा के संबंध में पक्षों के लिए विद्वान-सलाहकार द्वारा जोरदार ढंग से उठाए गए वैकल्पिक तर्कों पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ेंगे।

(34) विधायी शक्तियों का दायरा और राज्य विधानमंडल की क्षमता संविधान का 74वाँ संशोधन:

1992 के संशोधन अधिनियम द्वारा संविधान के 74वें संशोधन ने पहली बार 1 जून, 1993 से संविधान में नगर पालिकाओं की अवधारणा को लागू किया। भारत के संविधान का अध्याय IX-A अपने आप में एक स्व-निहित पूर्ण संहिता है, जिसमें नगर पालिकाओं का गठन और संरचना, वार्डों का गठन, सीटों का आरक्षण, सदस्यता की अयोग्यता, नगर पालिकाओं की शक्ति, अधिकार और जिम्मेदारी, नगर पालिकाओं का चुनाव और वे किस हद तक जारी हैं और चुनावी मामलों में अदालत द्वारा हस्तक्षेप करने पर रोक का प्रावधान है। अनुच्छेद 243 क्यू, 243 आर और 243 जेडएफ वे अनुच्छेद हैं जो वर्तमान मामले में हमारे सामने विवाद पर प्रभाव डालेंगे। अनुच्छेद 243 आर (1) के तहत नगरपालिका की सीटों को खंड के प्रावधानों के अधीन, प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा चुने गए व्यक्तियों द्वारा भरा जाएगा। (2). वास्तव में इस अनुच्छेद के प्रावधान अधिनियम की धारा 9 के समान हैं। संविधान के अनुच्छेद 243-आर का खंड (2) राज्य द्वारा प्रत्यायोजित विधान के विस्तार और दायरे का संकेत देता है। संसद ने अपने विवेक में अपने इरादे को स्पष्ट शब्दावली में व्यक्त करके राज्य विधान की सीमाओं को परिभाषित किया। यह अभिव्यक्ति के प्रयोग से परिलक्षित होता है (i) राज्य विधि द्वारा खंड 2-क के उपखंड (i) से (iv) में आने वाले व्यक्तियों के नगरपालिकाओं में प्रतिनिधित्व का उपबंध कर सकता है। इसके अलावा राज्य कानून द्वारा नगर पालिकाओं के अध्यक्ष के चुनाव का तरीका भी प्रदान कर सकता है। केवल प्रत्यायोजित विधान की सीमित शक्ति संविधान के अनुच्छेद 243-आर के आधार पर राज्य विधानमंडल के लिए उपलब्ध है, जो अनुच्छेद की भाषा में ही स्पष्ट रूप से प्रतिपादित है। कानून बनाने की यह सीमित शक्ति केवल उपरोक्त दो पहलुओं पर निर्भर करती है। यह प्रत्यायोजित विधान राज्य को निर्दिष्ट सीमा से अधिक कानून बनाने की शक्ति प्रदान नहीं करता है। इस अनुच्छेद में ऐसा कुछ भी नहीं है जो सामान्य प्रकृति का समझा जा सके जो इस संबंध में राज्य द्वारा विधान की शक्ति को व्यापक दायरे में देता हो। जाहिरा तौर पर इसमें कोई बचत खंड नहीं है। यह कानून का एक तय नियम है कि राज्य और केंद्रीय विधान के बीच संघर्ष या भिन्नता की स्थिति में, केंद्रीय विधान को प्राथमिकता दी जाएगी, विशेष रूप से जब ऐसी विधायी शक्ति उत्पन्न होती है, तो संवैधानिक प्रावधान से ही। भारत के संविधान में कोई भी संशोधन संसद और भारत

सरकार के अनन्य अधिकार क्षेत्र में आता है। राज्य द्वारा विधिबद्ध विधि जो संवैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करती है और संविधान के मूल ढांचे का उल्लंघन करती है, उसे संविधान के अधिकार क्षेत्र से बाहर होना चाहिए। राज्य के कानून को रास्ता देना चाहिए और केंद्रीय कानून के अनुरूप खड़ा होना चाहिए, क्योंकि यह अत्यधिक प्रत्यायोजित कानून के आधार पर अप्रभावी नहीं होना चाहिए। एक महत्वपूर्ण विशेषता जिस पर ध्यान देने की आवश्यकता है वह यह है कि संविधान के अनुच्छेद 243-आर के खंड 2-ए के खंड (i) से (iv) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों के अधिकार को केवल इस अनुच्छेद के परन्तुक की भाषा द्वारा नियंत्रित नहीं कहा जा सकता है और धारा 9 को केवल उसके अनुरूप ही अधिनियमित किया जा सकता है।

(35) भारत के संविधान के अनुच्छेद 251 के प्रावधानों को देखते हुए, इस चर्चा को हमें अब और बाधित करने की आवश्यकता नहीं है। संविधान के निर्माताओं ने एक स्पष्ट भाषा में राज्य के विधान की सीमाओं को निर्धारित किया है और उस मामले में कोई अन्य विधान जो या तो प्रतिकूल है या किसी भी संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन कर रहा है, इस तरह के अधिनियमन का समय महत्वहीन होगा। दूसरे शब्दों में, इससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा यदि ऐसी विधि संसद द्वारा अधिनियमित विधि से पहले या बाद में अधिनियमित की जाती है।

(36) हरियाणा अधिनियम की धारा 9 को नगरपालिका के गठन, उनके चुनावों और कामकाज आदि के संबंध में अनुच्छेद 243 (पी) से 243 (जेडजी) में निहित संवैधानिक जनादेश को पूरा करने के इरादे से बनाया गया है। राज्य विधानमंडल की योग्यता को संवैधानिक प्रावधानों में उल्लिखित सीमाओं द्वारा सीमित किया जाना चाहिए। नगरपालिका के अध्यक्ष के नगरपालिका में प्रतिनिधित्व और चुनाव के तरीके के लिए "कानून द्वारा उपबंध" अभिव्यक्ति स्पष्ट भाषा में एक निश्चित उद्देश्य को व्यक्त करती है कि राज्य की कानून बनाने की शक्ति एक समानांतर कानून बनाने या संवैधानिक कानून को अप्रभावी रूप से विफल करने के लिए नहीं है। नगरपालिका में प्रतिनिधित्व का प्रावधान करने के लिए राज्य द्वारा इस प्रकार अधिनियमित कानून अनुच्छेद 243 (आर) के खंड 2ए के (i) से (iv) में पहचाने गए व्यक्तियों के संबंध में है और (i) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को नगरपालिका की बैठक में मतदान करने से विशेष रूप से प्रतिबंधित कर दिया गया है। इसलिए, कानून को उसमें निर्दिष्ट लोगों के प्रतिनिधित्व के अलावा और अधिक शक्ति प्रदान करनी चाहिए और उससे संबंधित नहीं होना चाहिए। राज्य विधानमंडल न तो प्रतिनिधित्व के प्रकार को जोड़ सकता है और न ही अनुच्छेद 243 में निर्दिष्ट की गई बातों को घटा सकता है।(R). जिन विनिर्दिष्ट व्यक्तियों को मतदान के अधिकार का प्रयोग करने से प्रतिबंधित किया गया है, उन्हें राज्य द्वारा ऐसा अधिकार नहीं दिया जा सकता है और जिन व्यक्तियों को ऐसे अधिकार का प्रयोग करने से प्रतिबंधित नहीं किया गया है, उन्हें राज्य विधानमंडल द्वारा ऐसा करने से प्रतिबंधित नहीं किया जा सकता है। चुनाव के तरीके को सीमित तरीके से समझा जाना चाहिए। विधान बनाने की राज्य की क्षमता केवल एक ऐसा तरीका प्रदान करने के लिए है जिसके

द्वारा नगर पालिका के अध्यक्ष का चुनाव किया जाएगा और कुछ नहीं, जिसका प्रत्यक्ष रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा संवैधानिक प्रावधानों की भावना को नष्ट करने का प्रभाव होगा। अनुच्छेद 243 (आर) के खंड 2 (ए) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों को वोट देने के अधिकार से वंचित करने में एक स्पष्ट उद्देश्य है क्योंकि उनकी भूमिका नगरपालिका के प्रशासन में भाग लेने तक सीमित है और ऐसी भागीदारी उनके ज्ञान, अनुभव और प्रशासनिक कौशल पर आधारित है। दूसरे शब्दों में प्राथमिक उद्देश्य यह प्रतीत होता है कि ऐसे व्यक्तियों को एक कुशल और प्रगतिशील तरीके से नगरपालिका के प्रशासन को चलाने के लिए निर्वाचित निकाय को उचित सहायता और सहायता प्रदान करनी चाहिए। जबकि खंड (ii) और (iii) के तहत निर्दिष्ट व्यक्ति पहले से ही बहुत बड़े निर्वाचित निकायों यानी लोक सभा, विधान सभाओं या राज्य की परिषदों के लिए निर्वाचित व्यक्ति हैं, इन निर्दिष्ट व्यक्तियों को संविधान के किसानों द्वारा मतदान के अधिकार से वंचित नहीं किया गया है। इस प्रकार, यह आवश्यक निहितार्थ से होना चाहिए कि अनुच्छेद 243 (आर) के खंड 2 (ए) के (ii) और (iii) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों को समिति की बैठक में मतदान करने का अधिकार है। निर्वाचित निकाय में ऐसे व्यक्तियों का नामांकन उनके लोक सभा, विधान सभाओं और राज्य की परिषदों के निर्वाचित सदस्य होने का प्रत्यक्ष परिणाम है।

(37) इस संबंध में कानून बनाने की राज्य की शक्ति सीधे भारत के संविधान के अनुच्छेद 243 (आर) में निहित संवैधानिक प्रावधानों के परिणामस्वरूप प्रवाहित होती है और इसलिए प्रत्यायोजित विधान के आधार पर प्रयोग की जाने वाली शक्ति के अलावा और कुछ नहीं होगी। हमारी विधायी प्रणाली में प्रत्यायोजन की शक्ति व्यापक है। समान रूप से यह तथ्य भी सच है कि प्रत्यायोजन की शक्ति और प्रत्यायोजित विधान पर महत्वपूर्ण सीमाओं को भी अच्छी तरह से स्वीकार किया जाता है। उपर्युक्त प्रावधानों की भाषा से यह स्पष्ट है कि संसद ने राज्य विधानमंडल के पक्ष में अपनी विधायी शक्तियों का त्याग करने का इरादा नहीं किया था और न ही कभी किया था। इन प्रावधानों में लागू भाषा के आधार पर ऐसी व्याख्या सुरक्षित रूप से की जा सकती है। प्रत्यायोजित विधान के स्वीकृत सिद्धांतों में से एक यह है कि आम तौर पर विधानमंडल किसी कानून को निरस्त करने या यहां तक कि इसे आवश्यक विशेषताओं में संशोधित करने की अपनी शक्तियों को प्रत्यायोजित नहीं कर सकता है। इस तरह का प्रतिनिधिमंडल "स्पष्ट रूप से अत्यधिक प्रतिनिधिमंडल के सिद्धांत से प्रभावित होगा, रमेश बिर्च बनाम भारत संघ का संदर्भ लें। प्रत्यायोजित विधान की शक्ति का प्रयोग करते हुए अधिनियमित प्रावधान न्यायालय की जांच के लिए खुले होंगे और जहां भी ऐसे प्रावधान संविधान का उल्लंघन करते हैं या सक्षम अधिनियम का उल्लंघन करते हैं, वे न्यायिक समीक्षा के अधीन होंगे। रमेश बिर्च और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की टिप्पणियों पर ध्यान देने की आवश्यकता हैः—

> "हम सिद्धांत को रखने का बेहतर तरीका, हम समझते हैं, यह कहना है कि किसी अधिनियम का विस्तार जो मौजूदा कानून में परिवर्धन करता है, धारा 7 के तहत तब तक अनुमत होगा जब तक कि यह पहले से

मौजूद कानून के साथ स्पष्ट रूप से या निहित रूप से निरसन या संघर्ष नहीं करता है या इसके प्रतिकूल नहीं है। इस संदर्भ में हरि शंकर बागला ए. आई. आर. 1954 एस. सी. 465 और (1995) आई. एस. सी. आर. 380 में टिप्पणियों के लिए उपयोगी संदर्भ दिया जा सकता है, जो प्रत्यायोजित विधान के एक टुकड़े द्वारा मौजूदा कानून के "पारित होने" को स्वीकार करते हैं और केवल मौजूदा कानून को स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा निरस्त करने के प्रयास पर रेखा खींचते हैं। एक अर्थ में इसमें कोई संदेह नहीं है कि कोई भी जोड़, चाहे वह कितना भी छोटा क्यों न हो, मौजूदा कानून में संशोधन या परिवर्तन नहीं करता है, लेकिन जब तक यह वास्तव में इसके साथ रूप या संघर्ष को कम नहीं करता है, तब तक कोई कारण नहीं है कि इसे मौजूदा कानून के साथ खड़ा नहीं होना चाहिए।"

(38) टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी लिमिटेड बनाम मेसर्स टाटा आयरन एंड स्टील कंपनी लिमिटेड के कामगारों और अन्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रत्यायोजित विधान के दायरे पर निम्नलिखित टिप्पणी कीः

"त्वरित समाधान की आवश्यकता वाली जटिल सामाजिक-आर्थिक समस्याओं की चुनौती के कारण प्रतिनिधिमंडल की शक्ति अब तक आवश्यकता के अनुसार समग्र रूप से विधायी शक्ति का एक घटक तत्व बन गई है। हालाँकि, इस शक्ति की सीमा के संबंध में कानूनी स्थिति अब संदेह में नहीं है। विधायी शक्ति के प्रत्यायोजन की अनुमति केवल तभी दी जाती है जब विधायी नीति और सिद्धांत पर्याप्त रूप से निर्धारित किए जाते हैं और प्रतिनिधि को केवल विधायिका द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों के भीतर सहायक नीति को लागू करने का अधिकार होता है। यह ध्यान में रखा जाना चाहिए कि विधायिका अपने अधिकार का त्याग नहीं कर सकती है और संविधान द्वारा उस पर लगाए गए दायित्व और जिम्मेदारी को किसी अन्य निकाय को नहीं दे सकती है।"

(39) इस इस पृष्ठभूमि के साथ अब हम हरियाणा अधिनियम की धारा 21 में राज्य विधानमंडल द्वारा उपयोग किए गए "समिति के सदस्य" वाक्यांशों की व्याख्या करने के लिए आगे बढ़ते हैं। इसके अर्थ को समझने के लिए हमें अधिनियम की धारा 9 और धारा 18 के प्रावधानों पर गौर करना चाहिए। धारा 18 के तहत प्रत्येक समिति या परिषद को समिति के अध्यक्ष के रूप में अपने सदस्यों में से एक का चुनाव करना होता है।धारा 9 के तहत ऊपर निर्दिष्ट व्यक्ति को वोट देने का अधिकार है। एक बार जब कोई व्यक्ति किसी समिति का सदस्य हो जाता है तो उसके मतदान का अधिकार आवश्यक होगा जब तक कि ऐसा अधिकार विधायिका द्वारा जानबूझकर या तो विशिष्ट भाषा के उपयोग से छीन नहीं लिया जाता है या यदि ऐसी व्याख्या आवश्यक निहितार्थ के सिद्धांत पर आवश्यक हो

जाती है। हम यह देखने में असमर्थ हैं कि किस आधार पर अनुच्छेद 243 (आर) (2) ए के (ii) से (v) के तहत व्यक्तियों (समिति के सदस्यों) को मतदान के अधिकार से वंचित किया जा सकता है। वोट देने का अधिकार बहुत ही प्रकृति से समिति की उनकी सदस्यता के साथ होना चाहिए, जब तक कि इस तरह के अधिकार को किसी वैध कानून द्वारा विशेष रूप से बाहर नहीं किया जाता है। जबकि संविधान के निर्माताओं ने अनुच्छेद 243 (आर) के खंड (ii) से (iv) के तहत नामित समिति के सदस्यों और निर्वाचित सदस्यों के अधिकार पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाना उचित समझा, जबकि उन्होंने विशेष रूप से खंड (i) के तहत आने वाले नामित व्यक्तियों को समिति के मामलों में मतदान के अधिकार का प्रयोग करने से वंचित कर दिया। इस प्रकार, हरियाणा नगरपालिका अधिनियम की धारा 9 (3) के दूसरे परंतुक में शामिल किए गए प्रतिबंध का निर्माण करना राज्य की विधायी क्षमता के भीतर नहीं है। अतः धारा 9 (3) के दूसरे परन्तुक में दिखाई देने वाली "समिति के सदस्य" अभिव्यक्ति को अधिनियम की धारा 9 में निहित प्रावधानों के अनुसार पढ़ा जाना चाहिए। इस अधिनियम के उद्देश्यों और योजना को ध्यान में रखते हुए इसका उपरोक्त प्रावधानों के साथ सामंजस्यपूर्ण रूप से अर्थ लगाया जाना चाहिए। विधानमंडल का उद्देश्य उपर्युक्त निर्दिष्ट उपबंधों के अधीन समिति के अध्यक्ष के निर्वाचन के लिए उपबंध करना और समिति के सदस्यों के कम से कम 2/3 बहुमत द्वारा समर्थित अविश्वास मत के सिवाय उसे हटाने से बचाना है। समिति के सदस्य ऐसे सदस्य होने चाहिए जिन्हें इस संबंध में भाग लेने और निर्णय लेने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में, समिति के जिन सदस्यों से चर्चा में प्रभावी रूप से भाग लेने की अपेक्षा की जाती है कि क्या अविश्वास प्रस्ताव लाया जाना चाहिए या नहीं, उन्हें आवश्यक रूप से उस चर्चा को आगे बढ़ाने के लिए मतदान करने का अधिकार होना चाहिए, जब तक कि अन्यथा एक उचित विधान द्वारा ऐसे अधिकार का प्रयोग करने से वंचित न किया जाए। अविश्वास मत द्वारा राष्ट्रपति के चुनाव या निष्कासन को समिति का प्रशासनिक मामला नहीं कहा जा सकता है या नहीं कहा जा सकता है। यह एक बाध्यता है और वोट देने का अधिकार है जो समिति के सदस्यों पर हरियाणा अधिनियम के वैधानिक प्रावधानों से उपार्जित होता है। निर्वाचित सदस्य वास्तव में वे व्यक्ति हैं जो इस निकाय का गठन करते हैं। परिणामस्वरूप सभी निर्वाचित सदस्यों को बिना किसी प्रतिबंध और बाधा के भागीदारी और मतदान की लड़ाई लड़नी पड़ती है। समिति से संबंधित सभी मामलों में उनका मतदान का अधिकार निरंकुश और अप्रतिबंधित है। हरियाणा अधिनियम के प्रावधान किसी भी तरह से नवीन विधान का परिणाम नहीं हैं, बल्कि केवल संवैधानिक प्रावधानों का व्युत्पन्न पुनरुत्पादन हैं। ये प्रावधान केवल संवैधानिक प्रावधानों में निहित विधायी इरादे की भविष्यवाणी करते हैं। वे अपने आप में एक वर्ग बनाते हैं और अनुच्छेद 243 के खंड 2ए के (i) के तहत आने वाले नामित सदस्यों की तुलना में उच्च स्तर पर खड़े होंगे (R). निर्वाचित सदस्यों को इस अधिनियम के प्रावधानों के तहत भी एक निश्चित दर्जा दिया गया है। यह इस अधिनियम की योजना के बारे में सच होगा जो विभिन्न प्रावधानों में समिति के सदस्यों के संबंध में विभिन्न अभिव्यक्तियों का उपयोग करता है और उनके आचरण को नियंत्रित करने के लिए पूर्ण नियामक

उपाय, समिति के मामलों में शक्तियां और इस अधिनियम के तहत उन्हें उपलब्ध विशेषाधिकार भी प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में "समिति के 2/3 सदस्य" पद में केवल वे सदस्य शामिल होंगे जिन्हें 31 जुलाई, 1995 को भाग लेने और मतदान करने का अधिकार है।

(40) एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि अधिनियम की खंड 9 की उप-खंड 3 के खंड (i) में निर्दिष्ट व्यक्तियों को नगर पालिका की बैठक में मतदान करने से रोक दिया गया है।दूसरे शब्दों में, उन्हें अविश्वास प्रस्ताव जैसे महत्वपूर्ण मामलों में प्रशासनिक मामलों में भी मतदान करने का अधिकार नहीं है।

(41) यह कानून की व्याख्या का तय नियम है कि किसी अधिनियम के प्रावधानों का अर्थ इस तरह से लगाया जाना चाहिए जो प्रासंगिक कानून के निर्माताओं द्वारा इस तरह से प्राप्त किए जाने के उद्देश्य को आगे बढ़ाएगा और उद्देश्य को प्राप्त करेगा।समिति के निर्वाचित सदस्य या (ii) और (iii) के अंतर्गत आने वाले नामित सदस्य, जो स्वयं एक बहुत बड़े निकाय के लिए चुने गए सदस्य हैं, वे समिति के गठन के संबंध में इस तरह के महत्व के प्रश्न में भाग लेने और निर्धारित करने के लिए सही व्यक्ति होंगे।दूसरे शब्दों में, यह समिति के लिए सीधे चुने गए सदस्यों का दो तिहाई बहुमत होना चाहिए और राज्य सरकार द्वारा समिति के लिए नामित किए गए सदस्य संसद, विधानसभा और या विधान परिषद के सदस्य होने चाहिए।

(42) कानून की स्थिर स्थिति को देखते हुए, हम राज्य की ओर से उठाए गए इस तर्क को प्रतिग्रहण करना करने की स्थिति में नहीं हैं कि अधिनियम की खंड 9 (3) के खंड (ii) और (iii) के तहत निर्दिष्ट व्यक्तियों को मतदान का अधिकार नहीं होगा।उस सीमित सीमा तक परंतुक संवैधानिक प्रावधानों और *उनकी मूल* संरचना के अधिकार अधिकारातीत होगा।यह संविधान के अनुच्छेद 243-आर में निहित संवैधानिक प्रावधानों की मूल भावना का उल्लंघन करता है।मतदान का अधिकार समिति के उपरोक्त सदस्यों का एक अपरिहार्य अधिकार है।इस प्रकार, व्याख्या के किसी भी स्वीकृत मानदंडों पर आधारित और ऐसे निर्वाचित निकायों में कार्य करने की लोकतांत्रिक प्रणाली को नियंत्रित करने वाले सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए ऐसे निर्वाचक मंडल की यह अपरिहार्य व्याख्या होगी।

(43) प्रत्यायोजित विधायिका के बल पर अधिनियमित किसी भी कानून को ऐसे अपरिहार्य अधिकार को विफल करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, विशेष रूप से जब संवैधानिक प्रावधान उस पर कोई प्रतिबंध नहीं लगाते हैं। प्रत्यायोजित विधान के सीमित दायरे को संविधान के प्रावधानों में निहित दिशानिर्देशों और जनादेश का पालन करना चाहिए। इस प्रकार राज्य का विधान ऐसा कानून नहीं बना सकता जो संवैधानिक प्रावधानों के विपरीत हो या उसके मूल ढांचे को नष्ट कर दे।मतदान का अधिकार किसी भी लोकतांत्रिक प्रणाली का एक अभिन्न अंग है और

खंड (ii) और (iii) के तहत व्यक्ति स्पष्ट रूप से निर्वाचित व्यक्ति हैं जिन्हें बहुत बड़े निर्वाचन क्षेत्रों के लाभ के लिए अपनी भूमिका निभानी है और उनसे अपेक्षा की जाती है कि वे नगरपालिका के मामलों में अपने योगदान से नगरपालिका और इसकी कल्याणकारी गतिविधियों को आगे बढ़ाएं। इस परंतुक के लिए कोई वैध तर्क देखने में असमर्थ है जहां तक यह इन व्यक्तियों के वोट देने के अधिकार को सीमित और छीन लेता है। उस सीमा तक अधिनियम की धारा 9 (3) के दूसरे परंतुक के इस भाग को शेष परंतुक से अलग करने योग्य होने के कारण संवैधानिक प्रावधानों के अधिकार से परे माना जाना चाहिए। हमें ऐसा लगता है कि यह योजना संविधान के भाग IX-A में निहित प्रावधानों को रेखांकित करती है और संविधान के अनुच्छेद को सक्षम बनाती है जो राज्य को उस संबंध में सीमित सीमा तक कानून बनाने का अधिकार देती है। इस संदर्भ में वूलविच इक्विटेबल बिल्डिंग सोसाइटी बनाम अंतर्देशीय राजस्व आयुक्त, दिल्ली परिवहन निगम बनाम डीटीसी मजदूर कांग्रेस, पंजाब राज्य बनाम प्रेम सुखदास और एम. जे. शिवनी बनाम कर्नाटक राज्य के मामले में निर्णयों का संदर्भ दिया जा सकता है।

(44) इन सिद्धांतों का पालन करते हुए, हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि अधिनियम की खंड 9 का दूसरा परंतुक उस सीमा तक सीमित है जहां यह अधिनियम की खंड 9 की उप-खंड 3 के खंड (ii) और (iii) में निर्दिष्ट *सदस्यों अधिकारातीत* है।परंतुक के शेष भाग के संबंध में हम टिप्पणी करने से बचते हैं और किसी भी मामले में, परंतुक के शेष भाग को अनेकता के सिद्धांत के सिद्धांत पर सुरक्षित रूप से संरक्षित किया जा सकता है।

(45) अब हम संख्यात्मक रूप से हालांकि काल्पनिक रूप से प्रदर्शित करने के लिए आगे बढ़ेंगे, कि इन प्रावधानों को दी गई कोई भी अन्य व्याख्या कानून के उद्देश्यों को विफल करने की संभावना है। अधिनियम की खंड 9 की उप-खंड 3 के खंड (ii) और (iii) के तहत, राज्य की विधानसभा के सदस्य उन आकस्मिकताओं का प्रतिनिधित्व करते हैं जिनमें आंशिक रूप से या आंशिक रूप से शामिल हैं।पूर्णतया विचाराधीन नगरपालिका क्षेत्र और राज्य की नगरपालिका परिषद के सदस्यों को राज्य सरकार द्वारा नामित किया जाना आवश्यक है।नामांकन की यह कवायद संवैधानिक प्रावधानों की एक कमान है। संविधान के अनुच्छेद 243-आर में निहित है, जहां राज्य को ऐसी अधिसूचना लागू करने का निर्देश दिया गया है।हमारे समक्ष पक्षकारों का यह मामला स्वीकार किया जाता है कि पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 द्वारा पंजाब को पंजाब और हरियाणा राज्य में विभाजित करने के बाद आज तक किसी भी राज्य में राज्य परिषद का गठन नहीं किया गया है।इस प्रकार, राज्य द्वारा व्यक्तियों के नामांकन का प्रश्न अधिनियम की खंड 9 (3) के खंड (i) और (ii) तक ही सीमित रहना होगा।

(46) उप-धारा (i) के अधीन यदि हरियाणा नगरपालिका अधिनियम की धारा 9 है तो समिति का गठन धारा 2क के अधीन किया जाएगा और इसमें निर्वाचित सदस्यों की ऐसी संख्या होगी जो 11 से कम नहीं होगी। इस प्रकार, समिति के निर्वाचित सदस्यों की न्यूनतम संख्या 11 है। धारा 9 (3) (i) के तहत तीन

सदस्यों को नामित किया जाएगा जो समिति की सहायता करेंगे लेकिन उन्हें वोट देने का कोई अधिकार नहीं होगा जबकि धारा 9 (3) (ii) के तहत दो व्यक्तियों को नामित किया जाएगा। असंशोधित अधिनियम के तहत उन्हें मतदान करने का अधिकार था, लेकिन धारा 9 के दूसरे परंतुक के लागू होने के बाद उन्हें अविश्वास प्रस्ताव के प्रस्ताव पर विचार करते समय मतदान करने का भी अधिकार नहीं होगा। इस प्रकार, एक समिति के कुल 16 सदस्य होंगे, जिनमें से पहले तीन और अब 5 को वोट देने का अधिकार नहीं होगा। 16 सदस्यों का 2/3 10 से अधिक होगा और 11 तक गोल किया जा सकता है। इस प्रकार, अविश्वास प्रस्ताव लाने के लिए आवश्यक सदस्यों की कुल संख्या 11 होगी। निर्वाचित सदस्यों की संख्या भी 11 है। राष्ट्रपति/उपराष्ट्रपति, जिनके खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव लाया गया है, जाहिर है कि कभी भी अपने खिलाफ मतदान नहीं करते हैं और इसलिए किसी भी स्थिति में प्रस्ताव को कभी भी आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है। इस प्रकार, यह प्रदर्शित किया जाता है कि राज्य द्वारा और यहां तक कि कुछ हद तक याचिकाकर्ता के वकील द्वारा दी गई व्याख्या उद्देश्यपूर्ण रूप से विधान के उद्देश्य को प्राप्त नहीं करेगी। हालांकि, हमें यहां ध्यान देना चाहिए कि इस तर्क के समर्थन में राज्य की ओर से कोई कारण सामने नहीं रखा गया था कि अधिनियम की योजना के संशोधन द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य के बीच दूरस्थ संबंध भी था। वास्तव में संशोधित प्रावधान अधिनियम की योजना और विषय को नियंत्रित करने वाले संवैधानिक प्रावधानों के विपरीत हैं। वर्तमान मामले के तथ्यों पर इंगित पूर्व तर्क का परीक्षण करते हुए, यह फिर से प्रदर्शित किया जा सकता है कि संकल्प को कभी भी लागू किए जाने की संभावनाओं में बहुत अधिक प्रभावी होगा। नगरपालिका समिति, इंद्री में कुल 18 सदस्य हैं, जिनमें से 5 सदस्यों को संशोधित कानून के अनुसार मतदान करने का अधिकार नहीं होगा। इस प्रकार, जिन सदस्यों को वोट देने का अधिकार है, वे केवल 13 वर्ष के होंगे। 18 का 2/3 है 12एक राष्ट्रपति स्पष्ट रूप से अपने खिलाफ मतदान नहीं करेगा और उससे 13 निर्वाचित सदस्यों में से कम से कम एक समर्थक होने की उम्मीद की जाती है। इसलिए ऐसा राष्ट्रपति/उपराष्ट्रपति प्रस्ताव को विफल करने में सक्षम होगा। इसलिए, हमारा विचार है कि इन प्रावधानों की विवादित व्याख्या को स्वीकार करने की अनुमति नहीं होगी। इस तरह के प्रावधानों के पीछे कानून का इरादा जमीनी स्तर पर शासन और लोकतांत्रिक कामकाज से संबंधित है। इस तरह के पवित्र इरादे को इस तरह के उद्देश्यों को विफल करने के बजाय एक विधिवत निर्वाचित निकाय द्वारा निष्पक्ष प्रशासन के अपने अंतिम उद्देश्यों की ओर ले जाना चाहिए।

(47) कानूनी सिद्धांतों पर व्यापक चर्चा से जो पूरी तस्वीर सामने आती है, वह यह है कि अधिनियम की धारा 21 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति "समिति के सदस्य" को रंग लेना चाहिए और अधिनियम की धारा 9 (3) के प्रावधानों के साथ संयोजन में पढ़ा जाना चाहिए। इन दोनों प्रावधानों की स्पष्ट रूप से संविधान के अनुच्छेद 243 (आर) में निहित संवैधानिक प्रावधानों के संबंध में पूरी तरह से व्याख्या और व्याख्या की जानी चाहिए। आज जो कानून है, उसमें निर्वाचित सदस्य शामिल होंगे जो समिति के सदस्य हैं और जिन्हें इस तरह के उद्भव के प्रश्न पर विचार करने के लिए

प्रभावी ढंग से और उद्देश्यपूर्ण रूप से भाग लेने का अधिकार है और उन्हें वोट देने का निरंकुश अधिकार होगा। ये वे सदस्य हैं जिन्हें पात्र सदस्य माना जाना चाहिए और अधिनियम की धारा 21 के तहत कानून द्वारा बताए गए उद्देश्य को प्राप्त करने के उद्देश्य से समिति के सदस्य के रूप में माना जाना चाहिए। इस स्थिति को किसी भी मामले में नियमों के नियम 72 (ए) को लागू करके भी नहीं बदला जाएगा। यह नियम केवल यह अभिनिर्धारित करता है कि अविश्वास प्रस्ताव समिति के कुल सदस्यों में से 1/3 द्वारा हस्ताक्षरित होने के बाद ही प्रारंभ किया जाएगा, लेकिन प्रस्ताव को तभी पारित माना जाएगा जब समिति के 2/3 सदस्यों ने प्रस्ताव के लिए मतदान किया हो। इस प्रकार, इन प्रावधानों में कोई विरोधाभास नहीं है और उन्हें सामंजस्य में पढ़ा जाना चाहिए क्योंकि वे विभिन्न चरणों के रूप में काम करते हैं। इसका उद्देश्य यह प्रतीत होता है कि अविश्वास प्रस्ताव को इतने हल्के में शुरू नहीं किया जाना चाहिए कि यह एक दिनचर्या बन जाए। इस प्रकार कम से कम 6 सदस्यों से इस तरह के कदम पर हस्ताक्षर करने की अपेक्षा की जाती है (इस मामले के तथ्यों में) "समिति के सदस्य" अभिव्यक्ति का क्या अर्थ होना चाहिए, यह हम ऊपर पहले ही बता चुके हैं। हरियाणा नगरपालिका अधिनियम, 1973 की धारा 21 (3) के तहत अपेक्षित बहुमत निर्धारित करने के लिए, जिन सदस्यों को इस तरह के प्रस्ताव की चर्चा में प्रभावी रूप से भाग लेने का अधिकार है और जिन्हें वनों के रूप में मतदान करने का अधिकार है, वे ही सदस्य होंगे जो इस उद्देश्य के लिए गिने जाने के हकदार हैं। दूसरे शब्दों में, अधिनियम की धारा 9 (3) के खंड (i) के तहत निर्दिष्ट व्यक्ति उस उद्देश्य के लिए समिति के सदस्यों के रूप में गिने जाने के हकदार नहीं होंगे।

(48) इस प्रकार, हमारा विचार है कि राज्य की ओर से उठाया गया तर्क, नियम 72-ए पर राज्य के विद्वान वकील द्वारा रखी गई निर्भरता को आगे नहीं बढ़ा सकता है। भले ही हम यह तर्क के लिए मान लें कि नियम 72 (ए) पूर्वव्यापी हो सकता है, फिर भी, यह पूर्व में बताए गए कानून के मूल सिद्धांत को नहीं बदलेगा। विधानमंडल ने अपने विवेक में नियम 72 (क) के उपनियम 1 में समिति के सदस्यों की कुल संख्या के कम से कम I/3 पद का प्रयोग किया है जबकि उसी नियम के उपनियम (4) में प्रयोग की गई पद का प्रयोग समिति के 2/3 सदस्यों से कम नहीं है। उपरोक्त दोनों अभिव्यक्तियाँ अलग और अलग हैं। वे सजातीय प्रतीत हो सकते हैं, लेकिन वास्तव में, वे ऐसे नहीं हैं। उनके संचालन के क्षेत्र और चरण की स्पष्ट रूप से पहचान करने वाला स्पष्ट और निश्चित अंतर है, हालांकि उनका परिपथ संबंध हो सकता है। एक वहाँ संचालित होता है जहाँ कानून के अनुसार अविश्वास प्रस्ताव लाया जाना है। इस स्तर पर "समिति के सदस्यों की कुल संख्या" अभिव्यक्ति पर जोर दिया जाता है। विधानमंडल द्वारा उपयोग की जाने वाली अभिव्यक्ति "कुल संख्या" किसी भी सदस्य के संबंध में उनकी सदस्यता के चरित्र के संबंध में अपवाद को लागू करने की संभावना को बाहर करती है। वर्तमान मामले में सदस्यों की कुल संख्या 18 है जिनके एल/थर्ड को अविश्वास प्रस्ताव लाने के उद्देश्य से गिना जाना है।

जबकि अविश्वास प्रस्ताव केवल तभी लाया जा सकता है जब प्रस्ताव के पक्ष में मतदान करने के लिए समिति के 2/3 सदस्यों द्वारा समर्थित हो। इस प्रकार, समिति के सदस्यों के शब्दों को समिति के सदस्यों की कुल संख्या के शब्दों से अलग अर्थ और अर्थ दिया जाना चाहिए।

(49) भारत के संविधान के अनुच्छेद 169 की भाषा में कुछ इसी तरह का अंतर स्पष्ट किया गया है, जहां राज्य की विधान सभा विधानसभा के कुल सदस्यों के बहुमत और विधानसभा के उपस्थित और मतदान करने वाले 2/3 से कम सदस्यों के बहुमत से राज्य परिषद के उन्मूलन और निर्माण के लिए एक प्रस्ताव पारित कर सकती है। दूसरे शब्दों में, उनमें से किसी का भी गैर-अनुपालन इस तरह के संकल्प को विफल कर सकता है। इसी तरह, दो अलग-अलग चरणों में नियमों के नियम 72 (ए) के उप नियम (i) और (iv) का अनुपालन होगा। दूसरे चरण में अधिनियम की धारा 9 (3) के खंड (i) के अधीन सदस्यों को छोड़कर सदस्यों की संख्या से संबंधित अधिनियम की धारा 21 (3) के साथ पठित नियम 72-क के उपनियम 4 का अनुपालन।

(50) 1995 की सिविल रिट याचिका संख्या 10116 पर विचार करने वाली इस अदालत की माननीय खंडपीठ ने सुखबीर सिंह के मामले में इस अदालत की एक अन्य खंडपीठ के फैसले की शुद्धता पर संदेह जताया है। (PLR 1996, Vol-II, page 169). यद्यपि 1995 की सिविल रिट याचिका सं. 10116 में पारित डिवीजन बेंच का आदेश मात्र एक प्रवेश आदेश था, लेकिन बेंच के मन में संदेह का बिंदु 18 जुलाई, 1995 के आदेश में स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट किया गया था। इस प्रकार, अब हम सुखबीर सिंह के मामले में डिवीजन बेंच के फैसले पर चर्चा करने के लिए आगे बढ़ेंगे।

(51) हालाँकि सुखबीर सिंह के मामले में धारा 9 के संशोधन के साथ-साथ नियम 72 (ए) को शामिल करने पर कोई सवाल नहीं था क्योंकि माना जाता है कि उस मामले में राष्ट्रपति के खिलाफ अविश्वास का प्रस्ताव इन संशोधनों के बाद था। जैसा कि संशोधित प्रावधानों के आधार पर भी हमारे सामने विवाद उठाया गया है, जिनका हम पहले ही उत्तर दे चुके हैं। इस प्रकार, सुखबीर सिंह के मामले में लिए गए दृष्टिकोण की शुद्धता के संबंध में हमारे लिए एक विचार व्यक्त करना आवश्यक हो जाता है।

(52) इस विषय पर कानून पर चर्चा करने के बाद, माननीय खण्ड पीठ पाया कि अविश्वास प्रस्ताव को तब लागू माना जा सकता है जब समिति के कुल सदस्यों में से कम से कम दो तिहाई ने इसके पक्ष में मतदान किया हो।समिति के सदस्यों की पूरी संख्या को गिना जाना चाहिए और एक तिहाई संख्या या दो तिहाई संख्या प्राप्त करने के उद्देश्यों के लिए नामित सदस्यों को बाहर करने का कोई कारण नहीं है, जैसा कि अधिनियम के नियम 72-ए और खंड 21 (3) के अनुपालन का निर्धारण करने के लिए हो सकता है।

(53) सबसे पहले हमारा विचार है कि हरियाणा नगर निगम अधिनियम के

संशोधित प्रावधानों की वैधता के संबंध में प्रश्न माननीय खण्ड पीठ के समक्ष नहीं उठाया गया था।दूसरा, खण्ड पीठ के उनके प्रभुत्व ने अधिनियम की खंड 21 (3) में उपयोग की गई "समिति के सदस्यों की कुल संख्या" अभिव्यक्ति की तुलना "समिति के सदस्यों" से की, जिसके लिए हम खुद को सहमत होने के लिए राजी करने में असमर्थ हैं।

(54) हमें ऐसा प्रतीत होता है कि यदि माननीय खण्डपीठ द्वारा दिया गया दृष्टिकोण स्वीकार कर लिया जाता है तो यह स्पष्ट रूप से अन्यायपूर्ण परिणाम देने की संभावना है और संभवतः इसे प्राप्त करने के बजाय विधायी इरादों और उद्देश्य को विफल कर देगा। हम संविधान के अध्याय IX-A में निहित प्रासंगिक संवैधानिक प्रावधानों को नजरअंदाज नहीं कर सकते। विधायिका द्वारा उपयोग की जाने वाली भाषा मानवीय इरादे की अभिव्यक्ति और भाषा के निर्माण के लिए सबसे अच्छा और सही साधन है। इस प्रकार यह ऐसे प्रावधानों के तहत वास्तविक विधायी इरादे को निर्धारित करने में एक महत्वपूर्ण कारक होगा। सबसे पहले दी गई व्याख्या ने विधायिका द्वारा इच्छित उद्देश्य को प्राप्त कर लिया है और दूसरी बात यह है कि इसे बाधित या वंचित नहीं करना चाहिए, इस तरह के उद्देश्य की वास्तविक उपलब्धि है (आयकर आयुक्त, बैंगलोर बनाम जे. एच. गोटिया का संदर्भ लें) |हमने इन प्रावधानों के पीछे के उद्देश्य के साथ-साथ विधायी इरादे पर भी विचार किया है। कानून के निर्माण और व्याख्या के निर्धारित नियमों में इस संबंध में उपरोक्त दोहरी परीक्षा का प्रावधान है।

(55) हालांकि हम सुखबीर सिंह के मामले में व्यक्त किए गए विचार से आंशिक रूप से लेकिन सबसे सम्मानपूर्वक इस हद तक असहमत हैं कि अधिनियम की खंड 21 (3) और नियमों के नियम 72 (ए) (4) के अर्थ और दायरे के भीतर समिति के दो तिहाई सदस्यों के बहुमत का निर्धारण करने के लिए, अधिनियम की खंड 9 (3) के खंड (I) में निर्दिष्ट नामित सदस्यों को बाहर नहीं किया जाना चाहिए।

(56) इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा एक अन्य निर्णय (जहां इसी तरह का दृष्टिकोण लिया गया था) प्रीतम सिंह बनाम पंजाब राज्य के मामले को भी याचिकाकर्ताओं द्वारा उनके मामले के समर्थन में नोटिस में लाया गया था। फिर से सम्मानपूर्वक हम उस मामले में उनके प्रभु द्वारा निर्धारित प्रस्ताव को पूरी तरह से स्वीकार करने की स्थिति में नहीं हैं।

(57) इस प्रकार, हमारी उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हमारा मानना है कि नगरपालिका के अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के खिलाफ अविश्वास प्रस्ताव समिति के कुल सदस्यों की संख्या के कम से कम एक तिहाई, अर्थात् नामित सदस्यों के साथ-साथ निर्वाचित सदस्यों द्वारा पेश किया जाना होगा। लेकिन, प्रस्ताव को समिति के कम से कम दो तिहाई सदस्यों (i.e. निर्वाचित सदस्य और धारा 9 की

उपधारा (3) के खंड (ii) और (iii) के अधीन विनिर्दिष्ट सदस्य) | इसके अलावा, अधिनियम की धारा 9 की उपधारा (3) में नया अंतःस्थापित दूसरा परन्तुक जहां तक कि यह श्रेणी (ii) और (iii) में आने वाले सदस्यों को मतदान के अधिकार का प्रयोग करने से रोकता है, उस सीमित सीमा तक अति-प्रतिकूल घोषित किया जाता है, जो कि अनुच्छेद 243 (आर) और भारत के संविधान के अध्याय IX-A की योजना में निहित प्रावधानों, भावना और बुनियादी संरचना के विपरीत है। नतीजतन, हम वनों की सीमा तक उसी पर हमला करते हैं। इसलिए, एक समिति के सदस्य जिन्हें खंड (ii) और (iii) के तहत नामित किया जाता है, जो एक बहुत बड़े निर्वाचन क्षेत्र से निर्वाचित सदस्य होते हैं, जिसमें नगरपालिका स्वयं भाग लेती है, उन्हें समिति में अविश्वास प्रस्ताव पर विचार करते समय मतदान करने का अधिकार होगा। समिति के सदस्यों के लिए हमारे द्वारा दिए गए अर्थ को ध्यान में रखते हुए अविश्वास वर्तमान मामले के तथ्यों में प्रस्ताव किसी भी मामले में विफल हो जाएगा, चाहे संशोधित या असंशोधित अधिनियम के तहत जांच की गई हो। बिमला देवी *बनाम* पीठासीन अधिकारी, श्रम न्यायालय, भटिंडा 405 और अन्य (जी. एस. सिंघवी, जे.)

(58) वर्तमान मामले के तथ्यों पर लौटते हुए, नगर समिति, इंद्री के कुल 18 सदस्य हैं। जैसा कि पहले ही देखा गया है कि इसमें धारा 9 (3) (1) के तहत 13 निर्वाचित, 3 नामित और धारा 9 (ii) के तहत दो अन्य नामित व्यक्ति हैं और (iii). जैसा कि हम पहले ही अभिनिर्धारित कर चुके हैं कि अधिनियम की धारा 9 (ii) और (iii) के अधीन नामनिर्देशित व्यक्तियों को अविश्वास प्रस्ताव पर विचार करने में भाग लेने और मतदान करने का अधिकार होगा और यह कि समिति के सदस्यों में अन्य सदस्य शामिल होंगे परन्तु धारा (3) (i) के अधीन नामनिर्देशित सदस्य अपवर्जित होंगे, इस प्रकार प्रस्ताव पर विचार करने के प्रयोजन के लिए विषय होने वाले सदस्यों की कुल संख्या 18-3 = 15 होगी। 15 का 2/3 10 है। मान लीजिए, कथित अविश्वास प्रस्ताव को प्रस्ताव के पक्ष में 9 सदस्यों और प्रस्ताव के खिलाफ 4 सदस्यों द्वारा पारित किया गया था, इस प्रकार, प्रस्ताव को अपेक्षित बहुमत से पारित नहीं कहा जा सकता है। जैसा कि स्पष्ट है कि वर्तमान मामले में अविश्वास प्रस्ताव 9 सदस्यों द्वारा पारित किया गया था, इसलिए, यह समिति के 2/3 से कम सदस्यों के अपेक्षित बहुमत द्वारा समर्थित नहीं है और इस तरह प्रस्ताव विफल हो गया था।

(59) नतीजतन, हम इस याचिका को स्वीकार करते हैं और अधिनियम की

खंड 21 (3) के तहत उस तारीख को आयोजित अपनी विशेष बैठक में इंडिरी नगर पालिका द्वारा पारित प्रस्ताव संख्या 62 दिनांक 13 जुलाई, 1995 को रद्द कर देते हैं। स्पष्ट परिणाम यह होगा कि याचिकाकर्ता सभी परिणामी राहतों के हकदार हैं।

(60) हालांकि, प्रतिवादी कानून के अनुसार कार्य करने के लिए स्वतंत्र होंगे।मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

अस्वीकरण *:* स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

सूर्य करण चौधरी

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी
(Trainee Judicial Officer)

कहखोदा (सोनीपत) हरियाणा